# क्रांतिधर्मी साहित्य - युग साहित्य - इक्कीसवीं सदी का मार्गदर्शक साहित्य

क्रान्तिधर्मी साहित्य-युग साहित्य नाम से विख्यात यह पुस्तकमाला युगद्रष्टा-युगसृजेता प्रज्ञापुरुष पं.श्रीराम शर्मा आचार्य जी द्वारा १९८९-९० में महाप्रयाण के एक वर्ष पूर्व की अवधि में एक ही प्रवाह में लिखी गयी है। प्रायः २० छोटी-छोटी पुस्तिकाओं में प्रस्तुत इस साहित्य के विषय में स्वयं हमारे आराध्य प.पू. गुरुदेव पं.श्रीराम शर्मा आचार्य जी का कहना था-"हमारे ये विचार, क्रान्ति के बीज हैं। ये थोड़े भी दुनियाँ में फैल गए, तो अगले दिनों धमाका कर देंगे। सारे विश्व का नक्शा बदल देंगे।....मेरे अभी तक के सारे साहित्य का सार हैं।.... सारे जीवन का लेखा-जोखा हैं।.... जीवन और चिंतन को बदलने के सूत्र हैं इनमें।.... हमारे उत्तराधिकारियों के लिए वसीयत हैं।.... अभी तक का साहित्य पढ़ पाओ या न पढ़ पाओ, इसे जरूर पढ़ना। इन्हें समझे बिना भगवान के इस मिशन को न तो तुम समझ सकते हो, न ही किसी को समझा सकते हो।.... प्रत्येक कार्यकर्त्ता को नियमित रूप से इसे पढ़ना और जीवन में उतारना युग-निर्माण के लिए जरूरी है। तभी अगले चरण में वे प्रवेश कर सकेंगे।.... यह इस युग की गीता है। एक बार पढ़ने से न समझ आए तो सौ बार पढ़ना और सौ लोगों को पढ़ाना। उनसे भी कहना कि आगे वे १०० लोगों को पढ़ाएँ। हम लिखें तो असर न हो, ऐसा हो ही नहीं सकता। जैसे अर्जुन का मोह गीता से भंग हुआ था, वैसे ही तुम्हारा मोह इस युग-गीता से भंग होगा।.... मेरे जीवन भर का साहित्य इस शरीर के वजन से भी ज्यादा भारी है। यदि मेरे जीवन भर के साहित्य को तराजू के एक पलड़े पर रखें और क्रांतिधर्मी साहित्य को दूसरे पलड़े पर, तो इनका वजन ज्यादा होगा।.... महाकाल ने स्वयं मेरी उँगलियाँ पकड़कर ये साहित्य लिखवाया है।.... इन्हें लागत मूल्य पर छपवाकर प्रचारित-प्रसारित (शब्दशः-अक्षरशः) करने की सभी को छूट है, कोई कापीराइट नहीं है।....मेरे ज्ञान शरीर को मेरे क्रान्तिधर्मी साहित्य के रूप में जन-जन तक पहुँचाने का प्रयास करें।".....

# २१वीं सदी बनाम उज्ज्वल भविष्य

## प्रथम खंड

लेखक
पं. श्रीराम शर्मा आचार्य

प्रकाशक
युग निर्माण योजना
गायत्री तपोभूमि, मथुरा

आवृत्ति– २००५

मूल्य : ९.०० रुपए

# भूमिका

पिछले दिनों बढ़े विज्ञान और बुद्धिवाद ने मनुष्य के लिए अनेक असाधारण सुविधाएँ प्रदान की हैं, किंतु सुविधाएँ बढ़ाने के उत्साह में हुए इनके अमर्यादित उपयोगों की प्रतिक्रियाओं ने ऐसे संकट खड़े कर दिए हैं, जिनका समाधान न निकला, तो सर्वविनाश प्रत्यक्ष जैसा दिखाई पड़ता है।

इस सृष्टि का कोई नियंता भी है। उसने अपनी समग्र कलाकारिता बटोर कर इस धरती को और उसकी व्यवस्था के लिए मनुष्य को बनाया है। वह इसका विनाश होते देख नहीं सकता। नियंता ने सामयिक निर्णय लिया है कि विनाश को निरस्त करके संतुलन की पुनः स्थापना की जाए।

सन् १९८९ से २००० तक युग संधिकाल माना गया है। सभी भविष्यवक्ता, दिव्यदर्शी इसे स्वीकार करते हैं। इस अवधि में हर विचारशील, भावनाशील, प्रतिभावान को ऐसी भूमिका निभाने के लिए तैयार–तत्पर होना है, जिससे वे असाधारण श्रेय सौभाग्य के अधिकारी बन सकें।

# किंकर्त्तव्य विमूढ़ता जैसी परिस्थितियाँ

विज्ञान और बुद्धिवाद बीसवीं सदी की बडी उपलब्धियाँ हैं। उनसे सुविधा–साधनों के नए द्वार भी खुले, वस्तुस्थिति समझने में, सहायक स्तर की बुद्धि का विकास भी हुआ, पर साथ ही दुरुपयोग का क्रम चल पड़ने से इन दोनों ही युग चमत्कारों ने लाभ के स्थान पर नई हानियाँ, समस्याएँ और विपत्तियाँ उत्पन्न करनी आरंभ कर दीं। उत्पादनों को खपाने के लिए आर्थिक उपनिवेशवाद का सिलसिला चल पड़ा। युद्ध उकसाए गए, ताकि उनमें अतिरिक्त उत्पादनों को झोंका–खपाया जा सके। कुशल कारीगरी ने स्थान तो पाया, गृह उद्योगों के सहारे जीवनयापन करने वाली जनता की रोटी छिन गई। काम के अभाव में आज बड़ी संख्या में लोग बेकार–बेरोजगार हैं। परिस्थितियाँ गरीबी की रेखा से दिनोंदिन नीचे गिरती जा रही हैं, यों बढ़ तो अमीरों की अमीरी भी रही है।

कारखाने और द्रुतगामी वाहन निरंतर विषैला धुआँ उगल कर वायुमंडल को जहर से भर रहे हैं। उनमें जलने वाले खनिज ईंधन का इतनी तेजी से दोहन हुआ है कि समूचा खनिज भंडार एक शताब्दी तक भी और काम देता नहीं दीख पड़ता। धातुओं और रसायनों के उत्खनन से भी पृथ्वी उन संपदाओं से रिक्त हो रही है। उन्हें गँवाने के साथ–साथ धरातल की महत्त्वपूर्ण क्षमता घट रही है और उसका प्रभाव धरती के उत्पादन से गुजारा करने वाले प्राणियों पर पड़ रहा है। जलाशयों में बढ़ते शहरों का, कारखानों का कचरा, उसे अपेय बना रहा है। साँस लेते एवं पानी पीते यह आशंका सामने खड़ी रहती है कि उसके साथ कहीं मंद विषों की भरमार शरीरों में न हो रही हो? उद्योगों–वाहनों द्वारा छोड़ा गया प्रदूषण ''ग्रीन हाउस

इफेक्ट'' के कारण अंतरिक्ष में अतिरिक्त तापमान बढ़ा रहा है, जिससे हिम प्रदेशों की बर्फ पिघल जाने और समुद्रों में बाढ़ आ जाने का खतरा निरंतर बढ़ता ही जा रहा है। ब्रह्मांडीय किरणों की बौछार से पृथ्वी की रक्षा करने वाला ओजोन कवच, विषाक्तता का दबाव न सह सकने के कारण, फटता जा रहा है। क्रम वही रहा, तो जिन सूर्य किरणों से पृथ्वी पर जीवन का विकास क्रम हुआ है, वे ही छलनी के अभाव में अत्यधिक मात्रा में आ धमकने के कारण विनाश भी उत्पन्न कर सकती हैं।

अणु–ऊर्जा विकसित करने का जो नया उपक्रम चल पड़ा है, उसने विकिरण फैलाना तो आरंभ किया ही है, यह समस्या भी उत्पन्न कर दी है कि उनके द्वारा उत्पन्न राख को कहाँ पटका जाएगा? जहाँ भी वह रखी जाएगी, वहाँ संकट खड़े करेगी।

## स्थिति निश्चित ही विस्फोटक

यह विज्ञान के उत्कर्ष के साथ ही उसके दुरुपयोग की कहानी है, जिसमें सुखद अंश कम और दु:खद भाग अधिक है। वह उपक्रम अभी भी रुका नहीं है, वरन् दिन–दिन उसका विस्तार ही हो रहा है। अब तक जो हानियाँ सामने आई हैं, जो समस्याएँ उत्पन्न हुई हैं, उन्हीं का समाधान हाथ नहीं लग रहा है, फिर इस सबका अधिकाधिक संवर्धन अगले ही दिनों न जाने क्या दुर्गति उत्पन्न करेगा? इसका अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है कि कुछ ही समय के वैज्ञानिक दुरुपयोग का क्या नतीजा निकला और अगले दिनों उसकी अभिवृद्धि से और भी क्या अनर्थ हो सकने की आशंका है?

विज्ञान का दर्शन प्रत्यक्षवाद पर अवलंबित है। उसने दर्शन को भी प्रभावित किया है और यह मान्यता विकसित की है

निष्कर्ष आज के प्रत्यक्ष लाभ को प्रधानता देता है। परोक्ष का अंकुश अस्वीकार कर देने पर ईश्वर, धर्म और उसके साथ जुड़े हुए संयम, सदाचार और पुण्य–परमार्थ के लिए कोई भी स्थान नहीं रह जाता। मर्यादाओं और वर्जनाओं को अंधविश्वास कह कर, उनसे पीछा छुड़ाने पर इसलिए जोर दिया गया है कि इससे व्यक्ति की निजी सुविधाओं में कमी आती है। पूर्ति का सिद्धाँत यही कहता है कि जिस प्रकार भी, जितना भी लाभ उठाया जा सके, उठाना चाहिए, उसमें सिद्धाँत को आड़े नहीं आने देना चाहिए। इसी मान्यता ने पशु–पक्षियों के वध को स्वाभाविक प्रक्रिया बनाकर असंख्यों गुना बढ़ा दिया है। अन्य प्राणियों के प्रति निष्ठुरता बरतने के उपरांत जो बाँध टूटता है, वह मनुष्यों के साथ निष्ठुरता न बरतने का कोई सैद्धांतिक कारण शेष नहीं रहने देता। मनुष्य को पशु–प्रवृत्तियों का वहनकर्त्ता ठहरा देने के उपरांत यौन स्वेच्छाचार न बरतने के पक्ष में भी कोई ठोस दलील नहीं रह जाती।

विज्ञान और बुद्धिवाद की नई धाराएँ खोजने के लिए और उनके आधार पर तात्कालिक लाभ के जादू–चमत्कार प्रस्तुत करने वाली आधुनिकता, नीति और सदाचार का एक सिरे से दूसरे सिरे तक उन्मूलन करती, मनुष्य को स्वेच्छाचार बनाती जा रही है।

## बढ़ती आबादी, बढ़ते संकट

यह सब बातें कामुकता को प्राकृतिक मनोरंजन मानने और उसे उन्मुक्त रूप से अपनाने के पक्ष में जाती हैं। फलतः बंधनमुक्त यौनाचार जनसंख्या वृद्धि की नई विभीषिका खड़ी कर रहा है। गर्भ निरोध से लेकर भ्रूण हत्याओं तक को प्रोत्साहन मिलने के बाद भी जनसंख्या वृद्धि में तेजी से बढ़ोत्तरी हो रही

रही है। एक के चार, चार के सोलह, सोलह के चौसठ बनते-बनते संख्या न जाने कहाँ तक जा पहुँचेगी। तीन हजार वर्ष पहले मात्र तीस करोड़ व्यक्ति सारे संसार में थे, अब तो वे छः सौ करोड़ हो गए हैं। लगता है कि अगले बीस वर्षों में कम से कम दूने होकर ऐसा संकट उत्पन्न करेंगे, जिसमें मकान का, आहार का संकट तो रहेगा ही, रस्तों पर चलना भी मुश्किल हो जाएगा।

पृथ्वी पर सीमित संख्या में ही प्राणियों को निर्वाह देने की क्षमता है। वह असीम प्राणियों को पोषण नहीं दे सकती। बढ़ता हुआ जनसमुदाय अभी भी ऐसे अगणित संकट खड़े कर रहा हैं। खाद्य उत्पादन के लिए भूमि कम पड़ती जा रही है। आवास के लिए बहुमंजिले मकान बन रहे हैं, फिर भी खेती के अतिरिक्त अन्य कार्यों के लिए भी भूमि की बड़ी मात्रा में आवश्यकता पड़ रही है। जंगल बुरी तरह कट रहे हैं। उसमें घिरी हुई जमीन को खाली कर लेने की आवश्यकता, कानूनी रोकथाम के होते हुए भी किसी न किसी तरह पूरी हो रही है। वन कटते जा रहे हैं। फलस्वरूप वायु प्रदूषण की रोकथाम का रास्ता बंद हो रहा है। जमीन में जड़ों की पकड़ न रहने से हर साल बाढ़ें आती हैं, भूमि कटती है, रेगिस्तान बनते हैं। नदियों की गहराई कम होते जाने से पानी का संकट सामने आता है। फर्नीचर, मकान और जलावन तक के लिए लकड़ी मुश्किल हो रही है। वन कटने की अनेक हानियों को जानते हुए भी, आवास के लिए खाद्य के लिए सड़कों,स्कूलों और बाँधों के लिए जमीन तो चाहिए। यह सब जनसंख्या वृद्धि के दुष्परिणाम ही तो हैं। इन्हीं में एक अनर्थ और जुड़ जाता है, शहरों की आबादी का बढ़ना। बढ़ते हुए शहर, घिचपिच की गंदगी के कारण नरक तुल्य बनते जा रहे

## हर ओर बेचैनी, व्याधियाँ एवं उद्विग्नता

कोलाहल, प्रदूषण, गंदगी, बीमारियाँ आदि विपत्तियों से घिरा हुआ मनुष्य दिनोंदिन जीवनी शक्ति खोजता चला जाता है। शारीरिक और मानसिक व्याधियाँ उसे जर्जर किए दे रही हैं। दुर्बलता जन्य कुरूपता को छिपाने के लिए सज-धज ही एकमात्र उपाय दीखता है। शरीर और मन की विकृतियों को छिपाने के लिए बढ़ते श्रृंगार की आँधी, आदमी को विलास, आलसी, अपव्ययी और अहंकारी बना कर एक नए किस्म का संकट खड़ा कर रही है।

चमकीले आवरणों का छद्म उघाड़ कर देखा जाए, तो प्रतीत होता है कि इन शताब्दियों में मनुष्य ने जो पाया है, उसकी तुलना में खोया कहीं अधिक है। सुविधाएँ तो निःसंदेह बढ़ती जाती हैं, पर उसके बदले जीवनी शक्ति से लेकर शालीनता तक का क्षरण, अपहरण बुरी तरह हुआ है। आदमी ऐसी स्थिति में रह रहा है, जिसे उन भूत पलीतों के सदृश्य कह सकते हैं, जो मरघट जैसी नीरवता के बीच रहते और डरती-डराती जिंदगी जीते हैं।

समृद्धि बटोरने के लिए इन दिनों हर कोई बचैन है, किंतु इसके लिए योग्यता, प्रामाणिकता और पुरुषार्थ परायणता संपन्न बनने की आवश्यकता पड़ती है, पर लोग मुफ्त में घर बैठे जल्दी-जल्दी अनाप-शनाप पाना चाहते हैं। इसके लिए अनाचार के अतिरिक्त्त और कोई दूसरा मार्ग शेष नहीं रह जाता। इन दिनों प्रगति के नाम पर संपन्न बनने की ललक ही आकाश चूमने लगी है। उसी का परिणाम है कि तृष्णा भी आकाश छूने लगी है। इस मानसिकता की परिणति एक ही होती है, मनुष्य अनेकानेक दुर्गुणों से ग्रस्त होता जाता है। पारस्परिक विश्वास

और सहयोग की जिंदगी जी सकेगा, इसमें संदेह ही बना रहेगा।

अस्त–व्यस्तता और अनगढ़ता ने उभर कर, प्रगतिशील उपलब्धियों पर कब्जा कर लिया लगता है अथवा अभिनव उपलब्धियों के नाम पर उभरे हुए अति उत्साह ने, अहंकार बनकर शाश्वत मूल्यों का तिरस्कार कर दिया है। दोनों में से जो भी कारण हो, है सर्वथा चिंताजनक।

## वास्तविकता, जिसे कैसे नकारा जाए?

समस्त विश्व के आधे प्रतिभाशाली लोग युद्ध उद्देश्यों के निमित्त किए जाने वाले उद्योगों में प्रकारांतर से लगे हैं। पूँजी और इमारतें भी इसी प्रयोजन के लिए घिरी हुई हैं। बड़ों के चिंतन और कौशल भी इसी का ताना बाना बुनने में उलझे रहते हैं। इस समूचे तंत्र का उपयोग यदि युद्ध में ही हुआ, तो समझना चाहिए कि परमाणु आयुध धरती का महाविनाश करके रख देंगे। तब यहाँ जीवन नाम की कोई वस्तु शेष नहीं रहेगी। यदि युद्ध नहीं होता है, तो दूसरे तरह का नया संकट खड़ा होगा, जो उत्पादन हो चुका है, उसका क्या किया जाए? जन–शक्ति, धन–शक्ति और साधन–शक्ति इस प्रयोजन में लगी है, उसे उलट कर नए क्रम में लगाने की विकट समस्या को असंभव से संभव कैसे बनाया जाए?

इस सब में भयंकर है मनुष्य का उल्टा चिंतन, संकीर्ण स्वार्थपरता से बेतरह भरा हुआ मानस, आलसी, विलासी और अनाचारी स्वभाव। इन सबसे मिलकर वह प्रेत–पिशाच स्तर का बन गया है। भले ही ऊपर से आवरण वह देवताओं का, संतों जैसा ही क्यों न ओढ़े फिरता हो? स्थिति ने जनसमुदाय को शारीरिक दृष्टि से रोगी, अभावग्रस्त, चिंतित, असहिष्णु एवं कातर–आतुर बनाकर रख दिया है। इस सबका समापन किस

कुछ बन पड़ेगा? इस चिंता से हर विचारशील का किंकर्त्तव्यविमूढ़ होना स्वाभाविक है। सूझ नहीं पड़ता कि भविष्य में क्या घटित होकर रहेगा?

## सदुपयोग बन पड़े, तो परिवर्तन संभव

मनुष्य अनंत शक्तियों का भंडार है। उसमें से बहुत थोड़ा अंश ही शरीर व्यवसाय में खर्च हो पाता है। शेष शक्ति प्रसुप्त मूर्छित स्थति में पड़ी रहती है। काम में न आने पर पैने औजारों को भी जंग खा जाती है। प्रतिभा के अंग–प्रत्यंगों का प्रयोग न होने पर, मनुष्य भी मात्र कोल्हू के बैल की तरह किसी प्रकार जिंदगी के दिन काटता रहता है, पर जब भी उसका उत्साह उभरता है, तभी तत्परता, लगन, स्फूर्ति और गहराई तक उतरने, खाने–पीने की ललक, अपने जादू भरे चमत्कार दिखाने लगती है व्यक्ति कहीं से कहीं जा पहुँचता है और साधारण परिस्थितियों में भी ऐसा कुछ कर दिखाने लगता है, जिनसे आश्चर्यचकित हुआ जा सके।

पिछली तीन सदियों को आत्म जाग्रति का समय कहना चाहिए, भले ही वह भौतिक प्रयोजन के पक्ष में ही सीमित क्यों न रही हों। शक्ति का जहाँ भी प्रयोग होता है, वह अपना काम करती है। उसने किया भी। भौतिक प्रगति की दिशा में उसका रुझान जुड़ा, अन्वेषण चले और उसने प्रत्यक्षवाद के पुराने ढाँचे को एक नए दर्शन रूप में गढ़कर तैयार कर दिया। नई स्फूर्ति के साथ जब नवीनता उभरती है, तो उसका परिणाम भी असाधारण होता है। प्रगति के नाम पर बढ़ा–चढ़ा भौतिकवाद और प्रत्यक्षवाद संसार के सामने आया और उसने जन–जन को प्रभावित किया। आविष्कारों ने सुविधा–साधनों के अंबार जमा किए। बुद्धिमत्ता के नाम पर इतनी अधिक जानकारियाँ

पर्याप्त हो सकती थीं—हुईं भी। वैसे जानकारियाँ बढ़ाना सराहना के योग्य कार्य है, इसलिए प्रगतिशीलता का श्रेय भी उन सबको मिला है, जिनने यह उत्साह और पुरुषार्थ दिखाया।

## सदुपयोग बनाम दुरुपयोग

बात इतने पर ही समाप्त नहीं होती, वरन् इससे भी बड़े रूप में सामने आती है। वह है सदुपयोग में से एक के चयन की। स्वार्थपरता और अदूरदर्शिता का समन्वय जब भी होता है, तब एक ही बात सूझ पड़ती है कि जो कुछ जितना जल्दी बटोरा और उससे जितना भी कुछ मौज—मजा उठा सकना संभव हो, वैसा कर लिया जाए। उतावले, बचकाने व्यक्ति यही करते हैं। वे उपलब्धियों को धैर्य पूर्वक सत्प्रयोजनों में खर्च कर सकने की स्थिति में ही नहीं होते। ऐसा कुछ करते हैं जैसा कि सोने का अंडा रोज देने वाली मुर्गी का पेट चीरकर सारे अंडे एक ही दिन में निकाल लेने की दृष्टि से आतुर व्यक्ति ने किया था।

सदुपयोग से, किसी भी वस्तु से अपना और दूसरों का हित साधन किया जा सकता है, पर जब उसी का दुरुपयोग होने लगता है, तो एक माचिस की तीली से सारा गाँव जल जाने जैसा अनर्थ उत्पन्न होता है, प्रगतिशील शताब्दियों में पाया तो बहुत कुछ, पर दूरदर्शिता के अभाव में उसका सदुपयोग न बन पड़ा और उपयोग ऐसा हुआ, जिससे आज हर दिशा में संकटों के घटाटोप गहरा रहे हैं।

शासकों और धनाढ्यों के हित को प्राथमिकता न मिली होती, तो वैज्ञानिक उपलब्धियों ने जन—साधारण का स्तर कहीं से कहीं पहुँचा दिया होता। जब मशीनें मनुष्य के काम—काज में हाथ बँटाने लगीं थीं, तो उन्हें छोटे आकार का बनाया गया होता। कम परिश्रम में, कम समय में निर्वाह साधन जुटा लेने का

को अधिक सुयोग्य बनाने में लगाया गया होता। परिणाम यह होता कि हर कहीं खुशहाली होती। कोई बेकार न रहा होता और किसी को यह कहने का अवसर न मिला होता कि निजी व्यक्तित्व के विकास एवं समाज के बहुमुखी उत्कर्ष में योगदान करने का अवसर नहीं मिला, पर दुरुपयोग तो दुरुपयोग है, उसके कारण अमृत भी विष बन जाता है।

## सुनियोजिन की सही परिणति

बड़े शहर बसाने और बढ़ाने में लगी हुई बुद्धिमत्ता यदि अपनी योजनाओं को ग्रामोन्मुखी बना देने की दिशा में मुड़ गई होतीं, तो अब तक सर्वत्र छोटे–छोटे स्वावलंबी और फलते–फूलते कस्बे ही दिखाई पड़ते। न शहरों को घिचपिच, गंदगी तथा विकृतियों का भार वहन करना पड़ता और न गाँवों से प्रतिभा पलायन होते जाने के कारण, उन्हें गई गुजरी स्थिति में रहने के लिए बाधित होना पड़ता।

युद्धों को निजी या सार्वजनिक क्षेत्रों में समान रूप से अपराध घोषत किया जाता। छोटी पंचायतों की तरह अंतर्राष्ट्रीय पंचायतें भी विवादों को सुलझाया करतीं। आयुध सीमित मात्रा में पुलिस या अंतर्राष्ट्रीय पंचायतों के पास ही रहते, तो युद्ध सामग्री बनाने में विशाल धनशक्ति और जनशक्ति लगाने के लिए वैसा कुछ न बन पड़ता, जैसा कि इन दिनों हो रहा है। यह जनशक्ति और धनशक्ति यदि शिक्षा संवर्धन, उद्योगों के संचालन, वृक्षारोपण आदि उपयोगी कामों में लगी होती, तो युद्ध के निमित्त लगी हुई शक्ति को सृजन कार्य में नियोजित करके इतना कुछ प्राप्त कर लिया गया होता, जो अद्‌भुत और असाधारण होता।

शिक्षा का प्रयोजन अफसर या क्लर्क बनना न रहा होता और उसे जन–जीवन तथा समाज व्यवस्था के

सुसंस्कृत होते और अपनी समर्थता का ऐसा उपयोग करते, जिससे सर्वत्र विकास और उल्लास बिखरा-बिखरा फिरता। हर शिक्षित को दो अशिक्षितों को साक्षर बनाने के उपरांत ही यदि किसी बड़ी नियुक्ति के योग्य होने का प्रमाण पत्र मिलता, तो अब तक अशिक्षा की समस्या का समाधान कब का हो गया होता। उद्योगों का प्रशिक्षण भी विद्यालयों के साथ अनिवार्यतः जुड़ा होता तो बेकारी गरीबी की कहीं किसी को शिकायत न करनी पड़ती।

प्रेस और फिल्म, यह दो उद्योग जनमानस को प्रभावित करने में असाधारण भूमिका निभाते हैं। विज्ञान की इन दो उपलब्धियों के लिए यह अनुशासन रहा होता कि उनके द्वारा उपयोगी मान्यता प्राप्त विचारधारा को ही छापा जाएगा या फिल्माया जाएगा, तो इनसे मनुष्य की बहुमुखी शिक्षा की आवश्यकता की पूर्ति होती जनसाधारण को सुविज्ञ और सुसंस्कृत बना सकने में सफलता मिल गई होती।

## समाधान इस प्रकार भी संभव था

बुद्धि के धनी भी एक प्रकार के वैज्ञानिक हैं। शासन और समाज के विभिन्न तंत्र उन्हीं के संकेतों तथा दबाव से चलते हैं यदि समाजिक, कुरीतियों और वैयक्तिक अनाचारों के विरुद्ध ऐसी बाड़ बनाई गई होती, जो उनके लिए अवसर ही न छोड़ती, तो जो शक्ति बर्बादी में लगी हुई है, उसे सत्प्रयोजनों में नियोजित देखा जाता। अपराधों का, अनाचारों का कहीं दृश्य भी देखने को न मिलता। सर्वसाधारण को यदि औसत नागरिक स्तर का जीवनयापन करने की ही छूट रही होती, तो बढ़ी हुई गरीबी में से एक भी दृष्टिगोचर न होती। सब समानता और एकता का जीवन जी रहे होते। फिर न खाइयाँ खड़ी दीखतीं और न टीले

हर किसी को मिला होता। तब इन शताब्दियों में हुई बौद्धिक और वैज्ञानिक प्रगति को हर कोई सराहता और उसके सदुपयोग से धरती का कण–कण धन्य हो गया होता।

नशेबाजी –दुर्व्यसनों के लिए छूट मिली होने के कारण ही लोग इन्हें अपनाते हैं। उनका प्रतिपादन ही निषिद्ध रहा होता, पीने वालों को प्रताड़ित किया जाता, तो आज धीमी आत्म हत्या करने के लिए किसी को भी उत्साहित न देखा जाता। इस लानत से बच जाने पर लोग शारीरिक और मानसिक दृष्टि से संतुलित रहे होते और हर प्रकार की बरबादी–बदनामी से बच जाते। अन्यान्य दुर्व्यसनों से संबंधित इसी प्रकार के और भी अनेक ऐसे प्रचलन हैं, जो सामान्य जीवन में घुल मिल गए हैं। कामुकता भड़काने वाली दुष्प्रवृत्तियाँ फैशन का अंग बन गई हैं। बनाव, शृंगार, सज–धज के अनेक स्वरूप शान बनाने जैसे लगते हैं। आभूषणों में ढेरों धन बरबाद हो जाता है। बढ़ा हुआ बुद्धिवाद यदि इन अपव्ययों का विरोध करता, उनकी हानियाँ गले उतारता, तो खर्चीली शादियाँ, जो हमें दरिद्र और बेईमान बनाने का प्रमुख कारण बनी हुई हैं, इस प्रकार अड़ी और खड़ी न रहतीं।

ऊपर चढ़ना धीमी गति से ही संभव हो पाता है, पर यदि पतन के गर्त में गिरना हो तो कुछ ही क्षणों में बहुत नीचे पहुँचा जा सकता है। पिछले दिनों हुआ भी यही है। चतुरता के नाम पर मूर्खता अपनाई गई है। इसका प्रमाण यह है कि ठाट–बाट की चकाचौंध सब ओर दीखते हुए भी मनुष्य बेतरह खोखला हो गया है। चिंता, उद्विग्नता, आशंका, अशाँति का माहौल भीतर और बाहर सब ओर बना हुआ है। किसी को चैन नहीं। कोई संतुष्ट नहीं दीखता। मानसिक दरिद्रता के रहते विस्तृत वैभव

## निराशा में आशा की झलक

सामयिक परिस्थितियों में से यह कुछ चर्चा भर है। यहाँ यह समीक्षा की गई है कि यदि भविष्य को सही बनाने की दिशा में प्रयास–पुरुषार्थ संभव होता, तो ही भला था। निराश मन :स्थिति ऐसे में बनना स्वाभाविक है, किंतु निराशा की मानसिकता स्वयं में बड़ा संकट है। इससे मनोबल टूटता है, उत्साह में अवरोध आता है।

सृजन प्रयास सर्वथा बंद हो गए हों, यह बात नहीं। वर्तमान सुधारने व भविष्य को उज्ज्वल संभावनाओं से भरा बनाने हेतु किए जा रहे प्रयासों में शिथिलता भले ही हो, अभाव उनका भी नहीं है। यदि मनुष्य का हौसला बुलंद हो, तो प्रतिकूलताएँ होते हुए भी ऐसा कुछ किया जा सकता है, जिसे देखकर आश्चर्य होता रह सके। मिश्र के पिरामिड, पनामा की नहर, स्वेज कैनाल, चीन की विशाल दीवार जैसे प्रबल प्रयास आशावादी साहस भरे वातावरण में ही संपन्न हुए हैं। जब कई व्यक्ति मिलकर एक साथ वजन धकेलते हैं, तो उनकी संयुक्त शक्ति व मुँह से निकली ''हेईशा'' जैसी जादू भरी हुँकार वह उद्‌देश्य संपन्न कर दिखाती है।

ब्रिटिश प्रधानमंत्री सर विंस्टन चर्चिल ने द्वितीय विश्व युद्ध के दिनों में, हारते हुए ब्रिटेन वासियों का मनोबल बढ़ाने के लिए एक नारा दिया था–वी फार विक्ट्री। अर्थात जीतना हमें ही है, चाहे शत्रु कितना ही प्रबल क्यों न हो? इस संकेत सूत्र का इतना प्रचार हुआ कि यह सुनिश्चित विश्वास का, विजय का एक प्रतीक बन गया। इस हुँकार ने जादुई परिवर्तन कर दिखाया एवं युद्ध से बिस्मार हो रहा यूरोप जागकर उठ खड़ा हुआ। टूटा हुआ जापान हिरोशिमा की विभीषिका के बावजूद सृजन प्रयोजनों

सारे विश्व की उसी के हाथ में है। सुनिश्चित है कि लोगों की आस्थाओं को युग के अनुरूप विचार धारा को स्वीकारने हेतु उचित मोड़ दिया जा सके, तो कोई कारण नहीं कि सुखद भविष्य का, उज्ज्वल परिस्थितियों का प्रादुर्भाव संभव न हो सके? यह प्रवाह बदल कर उलटे को उलटकर सीधा बनाने की तरह भागीरथी कार्य है, किंतु असंभव नहीं, पूर्णतः संभव है।

## क्रिया बदलेगी, तो प्रतिक्रिया भी बदलेगी

क्रिया की प्रतिक्रिया होना सुनिश्चित है। घड़ी का पेंडुलम एक सिरे तक पहुँचने के बाद वापस दूसरे सिरे की ओर लौट पड़ता है। अति बरतने वाले कुछ ही समय बाद पछताते और सही स्थिति प्राप्त करने के लिए तरसते देखे गए हैं। विषैले पदार्थ खा बैठने पर उल्टी–दस्त तो लगते ही हैं, जान जोखिम तक का खतरा सामने आ खड़ा होता है। क्रोधी को बदले में प्रतिशोध सहना पड़ता है। दुर्व्यसनी अपनी सेहत, खुशहाली और इज्जत तीनों ही गँवा बैठता है। अपव्ययी लोग तंगी भुगतते देखे गए हैं। कुकर्मी, लोक और परलोक दोनों ही बिगाड़ लेते हैं। इसके विपरीत परिश्रमी, अनुशासित और मनोयोगपूर्वक व्यस्त रहने वाले अभीष्ट उद्देश्य की पूर्ति में दिन–रात सफल होते चले जाते हैं।

जिन दिनों शक्तियों के सदुपयोग का प्रचलन था, उन दिनों साधारण साधनों के रहते हुए भी लोग प्रसन्न रहते और सुख–शाँति भरे वातावरण में जीवन–यापन करते थे। सतयुग वही काल था, जिसकी सराहना करते–करते इतिहासकार अभी भी नहीं थकते हैं। इसके विपरीत यदि मर्यादाओं और वर्जनाओं का परित्याग कर अनाचारी–उदंदड उपक्रम अपनाया जाए, तो ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न होना स्वाभाविक है, जिनकी

होते हुए भी लोग डरती–डराती, जलती–जलाती जिंदगी जीते हैं। इन दिनों ऐसा ही कुछ हो रहा है। विज्ञान ने मनुष्य को अतिशय शक्ति का स्वामी बनाया है। बढ़ते बुद्धि वैभव ने जानकारियों के अंबार जुटा लिए हैं। विलास के साधनों की कमी नहीं। साज–सज्जा को देख कर भ्रम होता है कि कहीं हम लोग स्वर्ग में विचरण तो नहीं कर रहे हैं। इतना ही पर्याप्त होता तो, सचमुच यही माना जाता है कि इन शताब्दियों में असाधारण प्रगति हुई है, पर जब लिफाफे का कलेवर उघाड़ कर देखा जाता है तो प्रतीत होता है कि भीतर दुर्गंध भरे विषाणुओं, जीवाणुओं के अतिरिक्त और कुछ है ही नहीं। यह विडंबना, शालीनता के परित्याग का ही प्रतिफल है। विज्ञान और धर्म यदि मिलकर चले होते, तो आज की उपलब्धियाँ व्यक्ति और समाज के सामने सुख शांति के इतने आधार खड़े कर देती, जो सतयुग की तुलना में कहीं अधिक बढ़े–चढ़े होते, पर उस दुर्भाग्य को क्या कहा जाए, जिसने सदुपयोग और दुरुपयोग की विभाजन रेखा को ही मिटा कर रख दिया है।

## तेजी से बदलता परोक्ष जगत का प्रवाह

मनुष्य कर तो कुछ भी सकता है, पर उसकी परिणति से नहीं बच सकता। दुरुपयोग का परिणाम मात्र संकट और विग्रह ही हो सकता है। वही इन दिनों प्रस्तुत भी हो रहा है। संपन्नों और विपन्नों के बीच शीत युद्ध छिड़ा हुआ है। सज्जनता की उपेक्षा करने वाला प्रचलन स्नेह, सौजन्य और सद्भाव का समापन करने पर उतारू है। घात–प्रतिघात के कुचक्र में फँस कर मनुष्य ने संतोष, उल्लास और सहयोग गँवा दिया है। दूसरों का शोषण और अहंकार प्रदर्शन के अतिरिक्त और किसी को कुछ सूझता ही नहीं। ऐसे वातावरण में व्यक्तियों का

संतुलन तो बन ही कैसे पड़े? वायु प्रदूषण, अहंकार, अनाचार अपने-अपने ढंग से, अपने द्वारा किए जाने वाले महाविनाशों की चेतावनी दे रहे हैं। भूमि का दोहन, आबादी का बेतहाशा अभिवर्द्धन, अनौचित्य भरे प्रचलन, हर किसी को आशंका, अविश्वास, निराशा और आतंक से संत्रस्त किए हुए हैं। अगले दिन अंधकार भरे दीखते हैं। वर्तमान भी इतना उलझा हुआ है कि एक समस्या का हल ढूँढते-ढूँढते दस और नई विपन्नताएँ बढ़े-चढ़े रूप में सामने आ खड़ी होती हैं। सहयोग के स्थान पर संघर्ष ही स्वभाव और प्रचलन का अंग बनता जा रहा है।

इस माहौल में सूक्ष्म वातावरण भी विषाक्त हो चला है। प्रकृति अपने ऊपर बलात्कार किए जाने पर उपयुक्त दंड देने और प्रतिशोध लेने पर उतारू हो गई है। आए दिन दुर्भिक्ष पड़ता है। बाढ़, भूकंप, रोग-शोक के ऐसे घटनाक्रम आए दिन घटित होते रहते हैं। माता की तरह पोषण करने वाली प्रकृति अब मरने-मारने पर उतारू हो गई है। अणु-आयुधों, मृत्यु किरणों और विषैले रसायनों के प्रहार चल पड़ने के उपरांत इस धरती को निस्तब्ध पिंड के रूप में बने रहने का अवसर मिलेगा या नहीं, इसमें संदेह होता है। लगता है कि हर दिशा में उमड़ने वाले विनाश के बादल कहीं महाप्रलय तो करने नहीं जा रहे हैं? यह भी तो हो सकता है कि उन असह्य प्रहारों से यह सुंदर ग्रह कहीं धूल बनकर अनंत आकाश में छितरा न जाए और इसके अस्तित्व का कहीं अता-पता भी शेष न रहे।

साधारण अनुभव में पृथ्वी भी स्थिर दिखाई पड़ती है, दिन पर दिन इसी तरह गुजर जाते हैं, पर सूक्ष्म दृष्टि की गहराई में उतर सकने वाले जानते हैं कि धरती लट्टू की तरह अपनी धुरी पर भ्रमण करती है और साथ ही सूर्य की परिक्रमा

समझ में न आने वाला, किंतु इतने पर भी वस्तु स्थिति ऐसी ही है। औसत आदमी सब कुछ यथावत चलता समझ सकता है, किंतु लक्षणों का पर्यवेक्षण कर सकने वाले देखते हैं कि स्थिति इन दिनों में विस्फोटक है और बारूद के ढेर पर बैठे हम सब निकट भविष्य में महाविनाश के ग्रास बनने जा रहे हैं।

बीसवीं सदी का अंत किन दुर्दशाओं के बीच होगा, इसकी चेतावनी विषेशज्ञों से लेकर भविष्यवक्ता तक समान रूप से देते रहे हैं। आशंका है कि वह दुर्दिन कल–परसों ही कहीं सामने आ खड़ा न हो? विकास के नाम पर हम विनाश की दिशा में चले हैं। आज ही सब कुछ पा लेने की सोच में भविष्य को बुरी तरह दाँव पर लगाते रहे हैं। पृथ्वी के खनिज भंडार चुक सकते हैं। बढ़ी हुई जनसंख्या के लिए आहार–विहार तो दूर, राह चलने के लिए भी पृथ्वी छोटी पड़ सकती है। जीवनी शक्ति गँवा बैठने के बाद लोग मक्खी–मच्छरों की तरह बेमौत मरेंगे। सद्भाव और सहयोग के अभाव में लोग प्रेत–पिशाच से अधिक कुछ रहेंगे ही नहीं, भले ही उनके पास सज्जा और संपदा कितनी ही अधिक क्यों न हो? लक्षण आज भी सामने है। कल तो उनके घटने की नहीं, बढ़ने की ही आशंका है।

## संतुलन नियंता की व्यवस्था का एक क्रम

इतने पर भी एक बात ध्यान में रखनी चाहिए कि इस सृष्टि का कोई नियंता है। उसने अपनी समग्र कलाकारिता को बटोर कर इस धरती को, उस पर शासन करने वाले मनुष्य को बनाया है। वह उसका इस प्रकार विनाश होते देख नहीं सकता। बच्चों को एक सीमा तक ही मस्ती करने की छूट दी जाती है। जब भी वे उपयोगी और कीमती चीजें तोड़ने पर उतारू हो जाते हैं, तो उन्हें दुलार करने वाले अभिभावक भी ताड़ना देने पर

बाधित करती है कि पीछे लौट चला जाए। अनाचारियों को अति बरतने की उद्दंडता पर उतरने से पूर्व ही जेल में बंद कर दिया जाता है। कभी–कभी तो उन्हें मृत्यु दंड तक देना पड़ता है। शरीर में प्रवेश करने वाली बीमारियों को खदेड़ देने के लिए जीवनी शक्ति एकत्रित होकर सब कुछ करने पर उतारू हो जाती है। वर्तमान अनाचार के संबंध में भी यही बात है। नियंता ने सामयिक निश्चय लिया है कि विनाश की दिशा में चल रही अंधी दौड़ को रोक दिया जाए और फिर प्रवाह को संतुलित स्तर पर लाया जाए। शासन संचालक जब अयोग्यता प्रदर्शित करता है, तो राष्ट्रपति शासन लागू होता है और अयोग्यों के स्थान पर सुयोग्यों के हाथ सत्ता सौंपने हेतु वही उच्चस्तरीय नियंत्रण चलता है।

अंधकार की भयानकता और उसके कारण उत्पन्न होने वाली अव्यवस्था से भी सभी परिचित हैं, पर साथ ही यह भी ध्यान रखने योग्य है कि सृष्टि व्यवस्था उसे अधिक समय तक सहन नहीं करती। ब्रह्म मुहूर्त आता है, मुर्गे बोलते हैं, पूर्वाचल में उषाकाल का आभास मिलता है, जो अपने आलोक से दसों दिशाएँ भर देता है। हलचलों का नया माहौल बनता है, यहाँ तक कि फूल खिलने, पक्षी चहकने, उड़ने, फुदकने लगते हैं।

वर्तमान प्रवाह को चरम विनाश के बिंदु तक जा पहुँचने से पहले स्रष्टा ने उस पर रोक लगाने और परिवर्तन का नया माहौल बनाने का निश्चय किया है। इसका अनुमान सभी सूक्ष्मदर्शी समान रूप से लगाने लगे हैं। नया सोच आरंभ हो रहा है। दृष्टिकोण की दिशा बदल रही है। गतिविधियों के नए निर्धारण की योजनाएँ बन रही हैं। यह परिवर्तन मनुष्यों के मूर्धन्य क्षेत्रों में

अदृश्य शक्तियाँ अपने ढंग से अपने क्षेत्र में ऐसा कुछ चमत्कार दिखाने पर तुल गई हैं, जो अवाँछनीय प्रचलनों को उलटने और उनके स्थान पर नए मूल्यों–कीर्तिमानों की स्थापना कर पाने में सफल हो सके।

समय की गति, मनुष्यों की प्रचंड पुरुषार्थ परायणता के कारण अत्यधिक तेज हो गई है। जो सृष्टि के आदि से अब तक नहीं बन पड़ा था, वह पिछली थोड़ी सी शताब्दियों में ही आश्चर्यजनक ढंग से बन पड़ा है। भले ही वह अवाँछनीय या बुरा ही क्यों न हो। समय की चाल तेज हो जाने पर घंटे में तीन मील चलने वाला व्यक्ति वायुयान में चढ़कर उतनी ही देर में कहीं से कहीं जा पहुँचता है। मनुष्य के प्रबल पुरुषार्थ की ऊर्जा से समय–प्रवाह में अतिशय तेजी आई है। उसने जो भी भला बुरा किया है, तेजी से किया है। यह द्रुतगामिता आगे भी जारी रहेगी। सुधारक्रम भी उतनी ही तेजी से होगा। तूफान जिस भी दिशा में मुड़ता है, उसी में अपनी प्रचंडता का परिचय देता चलता है।

हर बात की एक सीमा होती है। रावण, कंस, हिरण्यकश्यप, वृत्रासुर आदि भी उभरे तो तेजी से, पर उसी गति से उनका अंत भी हो गया। पानी में बबूले तेजी से उठते हैं और उसी तेजी से वे उछलते और तिरोहित हो जाते हैं। फसल पकती है और कटने के बाद उसी जगह नई उगाई जाती है। जर्जर शरीर मरते और नया जन्म धारण करते हैं। खंडहरों के स्थान पर नई इमारतें खड़ी होती हैं। इसी क्रम के अनुसार अवाँछनीयताओं का माहौल अब समाप्त होने ही जा रहा है और उसका स्थान सच्चे अर्थों वाली प्रगतिशीलता ग्रहण करेगी।

था। वही इस बार भी होने जा रहा है।

## इक्कीसवीं सदी बनाम उज्ज्वल भविष्य

इन आधारों पर इक्कीसवीं सदी सुखद संभावनाओं की अवधि है। बींसबीं सदी में उपलब्धियाँ कम और विभीषिकाएँ अधिक उभरी हैं। अब उस उपक्रम में क्रांतिकारी परिवर्तन होने जा रहा है। प्रातः सायं की संधि बेला की तरह बीसबीं सदी का आरंभ वाला यह समय युगसंधि का है। इसका भी अपना एक मध्यकाल है, जिसे बारह वर्ष का माना गया है, सन १९८९ से २००० तक का। इस बीच मध्यवर्ती स्तर के सूक्ष्म और स्थूल परिवर्तनों की क्रांतिकारी तैयारी होगी। बुझता हुआ दीपक अधिक ऊँची लौ उभारता है, मरते समय चींटी के पंख उगते हैं। मरणकाल में साँसों की गति तेज हो जाती है। दिन और रात के मिलन वाला संध्याकाल भी अनेक विचित्रताओं को लिए हुए होता है। प्रसव पीड़ा के समय दो प्रकार की परस्पर विरोधी विचित्रताएँ देखी जाती हैं। एक ओर पीड़ा की कराह सुनी जाती है, तो दूसरी ओर संतान लाभ की प्रसन्नता भी उस परिवार के सभी लोगों पर छाई होती है। युग संधि के इन बारह वर्षों में चलने वाली उथल–पुथल भी ज्वार भाटे जैसी है। इसमें एक ओर अवाँछनीयता हारे जुआरी की तरह दूने दाँव लगाती देखी जाएगी और अनर्थ उत्पन्न करने में कुछ उठा न रखेगी। दूसरी ओर सृजन के दृश्य और प्रयास भी अपना अपना पूरा जोर आजमाकर बाजी जीतने की चेष्टा में प्राणपण से जुटे दिखाई पड़ेंगे।

युग संधि की इस ऐतिहासिक वेला में सृजन संभावनाओं के दृश्यमान प्रयत्न जहाँ शासन, अर्थ क्षेत्र, विज्ञान आदि की परिधि में दिखाई पड़ेंगे, वहाँ अध्यात्म शक्तियाँ भी अपने तप–

हरिश्चंद्र, विश्वामित्र आदि द्वारा किए गए महान परिवर्तनों की भूमिका निबाही जाती देखी जा सके। लोक सेवियों का एक बड़ा वर्ग भी इन्हीं दिनों कार्य क्षेत्र में उतरेगा और राम के रीछ वानरों, कृष्ण के ग्वाल–बालों, बुद्ध के परिव्राजकों और गाँधी के सत्याग्रहियों की अभिनव भूमिका का निर्वाह करते हुए एक नए इतिहास की नई संरचना करते हुए देखा जाएगा। यह सब अदृश्य प्रयत्नों की ही अनुकृति समझी जा सकेगी।

## अदृश्य जगत से सक्रिय परिवर्तन की लहरें

दृश्य घटनाएँ और हलचलें सामने उपस्थित और आँखों से दीखने वाली होती हैं, पर उनका आरंभ अदृश्य जगत से होता है। जीवित रहने के लिए साँस की प्रधान आवश्यकता है, जो अन्न जल से भी अधिक महत्वपूर्ण और आकाश में अदृश्य रूप से विद्यमान है। ऋतु परिवर्तन, प्राणियों और क्रिया–कलापों को असाधारण रूप से प्रभावित करता है। मनुष्यों की भली–बुरी क्रियाएँ अदृश्य जगत के वातावरण को प्रभावित करती हैं और फिर वहाँ से वे तदनुरूप परिस्थितियाँ बनकर उतरती हैं। उन्हीं के प्रतिफल सुख और दु :ख के प्रतीक बनकर उतरते हैं। इन दिनों जो हो रहा है, उसका कारण लोक प्रचलन तो है ही, अदृश्य जगत के तूफानी प्रवाह भी परिस्थितियों को कम प्रभावित नहीं करते। समाधान के उपाय प्रत्यक्ष स्तर के तो होने ही चाहिए, पर साथ ही यह भी आवश्यक है कि अध्यात्म उपचारों के जैसे सूक्ष्म क्षेत्र के पुरुषार्थ भी वैसे किए जाएँ, जैसे कि स्वाधीनता संग्राम के दिनों में महिर्षि अरविंद, रमण, पौहारी बाबा, रामकृष्ण परमहंस आदि ने किए थे। पक्षी दोनों पंखों के सहारे उड़ता है। विपत्तियों से जूझने और प्रगति के क्षेत्र में ऊँची उडाने उडने के लिए न केवल विकास के पक्षधर प्रयासों को

जिसमें देवताओं की संयुक्त शक्ति से दुर्गा का अवतरण हुआ था तथा ऋषियों ने रक्त से घड़ा भरकर सीता को उत्पन्न किया था। उनके माध्यम से ही असुर दमन, लंका दहन और राम राज्य की पृष्ठभूमि बनाने वाला अदृश्य आधार खड़ा किया था।

## व्यापक परिवर्तनों से भरा संधिकाल

सृष्टि के आदि काल से अब तक कई ऐसे अवसर उपस्थित हुए हैं, जिनमें विनाश की विभीषिकाओं को देखते हुए ऐसा लगता था, जैसे महाविनाश होकर रहेगा, किंतु इससे पूर्व ही ऐसी व्यवस्था बनी, ऐसे साधन उभरे, जिसने गहराते घटाटोप का अंत कर दिया। वृत्रासुर, रावण, कंस, दुर्योधन आदि असुरों का आतंक अपने समय में चरमावस्था तक पहुँचा, किंतु क्रमशः ऐसा कुछ होता चला गया कि जो प्रलंयकारी विनाशकारी दीखता था, वही आतंक अपनी मौत मर गया। देवासुर संग्राम के विभिन्न कथानक भी इसी श्रृंखला में आते हैं।

इतिहास पर हम दृष्टि डालें, तो हर युग में, हर काल में यह परिवर्तन प्रक्रिया गतिशील रही है। अभी कुछ ही दशकों पूर्व की बात है, एक समय था, जब सर्वत्र राजतंत्र का बोलबाला था। जब तक जनता का समर्थन उसे मिला, तब तक राजाओं का अस्तित्व बना रहा है। जब उसने इसकी हानियों को समझा, तो प्रजातंत्र का आधार खड़ा होते भी देर न लगी। कभी नारी जाति प्रतिबंधित थी। तब उसे पर्दे के भीतर रहने और पति की मृत्यु के उपरांत शव के साथ जला दिए जाने की व्यथा भुगतनी पड़ती थी, पर अब ऐसी बात नहीं रही। ऐसे ही दास प्रथा, जमींदारी, बाल–विवाह, नर–बलि, छुआछूत, जातिवाद की कितनी ही कुप्रथाएँ पिछली एक दो शताब्दियों में प्रचलन में थी, पर समय के प्रवाह ने उन सब को उलट कर सीधा कर दिया।

आशा बिना किसी दुविधा के की जा सकती है।

यह सत्य है कि पिछले समय की तुलना में अब कार्य अल्प समय में ही संपन्न होने लगे हैं। पहले जिन कार्यों के पूरे होने और व्यापक बनने में सहस्राब्दियाँ लगतीं थीं, अब वे दशाब्दियों में पूरे हो जाते हैं। ईसाई धर्म जिस गति से संसार में छाया वह सर्वविदित है। यही बात साम्यवादी विचारधारा के साथ भी देखी जा सकती है, जिसने सौ वर्ष के अंदर ही विश्व के दो तिहाई लोगों को अपने में समाहित कर लिया। अँग्रेजी सभ्यता अब विश्वव्यापी बन चुकी है, जबकि हजारों वर्ष पुरानी सभ्यताएँ और विचारधाराएँ मंथर गति से ही चल सकीं व विस्तार पा सकीं। यह सब समय की रफ्तार में परिवर्तन के प्रमाण हैं, जो सूचित करते हैं कि लंबे परिवर्तन चक्र अब छोटे में सिमट–सिकुड़ रहे हैं।

पाँच सौ वर्ष पूर्व का यदि कोई व्यक्ति आज की इन बदली परिस्थितियों को देखे, तो उसे यही लगेगा कि वह किसी नई जगह, नई नगरी में पहुँच गया है, जहाँ मनुष्य को तथाकथित ऋद्धि–सिद्धियाँ हस्तगत हो गई हैं। विद्युत से लेकर, टैलीकम्युनिकेशन, लेसर, कंप्यूटर आदि ने धरती पर चमत्कारी परिवर्तन कर दिखाए हैं। लगता है मानवी बुद्धिमत्ता अपनी पराकाष्ठा तक पहुँच चुकी है, जहाँ वह कुशाग्रता एवं तीव्र गतिचक्र के सहारे कुछ भी करने में समर्थ है। यह भी सही है कि यह गतिशीलता आने वाले समय में घटेगी नहीं, वरन् और बढ़ेगी ही। इसकी व्यापकता हर क्षेत्र में होगी। विज्ञान और बुद्धि दोनों ही इसके प्रभाव क्षेत्र में आ जाएँगे। रीति–रिवाजों और गतिविधियों में सिर्फ क्रांतिकारी परिवर्तन होंगे, वरन् उसी क्रांतिकारी ढंग से वे अपनाए भी जाएँगे। इस महान परिवर्तन

मनीषीगण देख भी रहे हैं व पूर्वानुमान के आधार पर उस संभावना की अभिव्यक्ति भी कर रहे हैं।

पिछले दिनों कितने ही भविष्यवक्ताओं, अदृश्यदर्शियों, धर्म–ग्रंथों की भविष्यवाणियाँ–चेतावनियाँ सामने आती रही हैं। इन सब में आने वाले समय को संकटों व नवयुग की संभावनाओं से परिपूर्ण बताया है। ईसाई धर्म में ''सेवन टाइम्स'' इस्लाम धर्म में ''हिंजरी'' की चौदहवीं सदी इन सब की संगति प्राय: बीसबीं सदी के समापन काल के साथ बैठती है। वर्तमान में प्रकृति प्रकोपों के रूप में घटित होने वाली विभीषिकाओं की संगति भी ईश्वरीय दंड प्रक्रिया के साथ कुछ सीमा तक बैठ जाती है। अस्तु, बीसवीं और इक्कीसवीं सदी के संधिकाल में विपत्ति भरा वातावरण दीख पड़े तो इसे अप्रत्याशित नहीं समझना चाहिए। ऐसे में सृजन संभावनाएँ भी साथ–साथ गतिशील होती दिखें, तो उन्हें भी छलावा न मानकर यह समझना चाहिए कि ध्वंस व सृजन, संधि वेला की दो अनिवार्य प्रक्रियाएँ हैं, जो साथ–साथ चलती हैं।

## युग परिवर्तन का यही समय क्यों?

युग का अर्थ ''जमाना'' होता है। जिस जमाने की जो विशेषताएँ–प्रमुखताएँ होती हैं, उन्हें ''युग'' शब्द के साथ जोड़कर उस कालखंड को संबोधित करने का प्राय: सामान्य प्रचलन है, यथा–ऋषियुग, सामन्त युग, जनयुग आदि।

इसी संदर्भ में वर्तमान को विज्ञानयुग, यान्त्रिकीय युग इत्यादि कहा गया है। इसी भाँति पंचागों में कितने ही संवत्सरों के आरंभ संबंधी मान्यताओं की चर्चा है। एक मत के अनुसार युग करोड़ों वर्षों का होता है। इस आधार पर मानवी सभ्यता की शुरूआत के खरबों वर्ष बीत चुके हैं और वर्तमान कलियुग की

आधार पर नृतत्ववेत्ताओं और इतिहासकारों का कहना है कि मानवी विकास अधिकतम उन्नीस लाख वर्ष पुराना है, इसकी पुष्टि भी आधुनिक तकनीकों द्वारा की जा चुकी है।

काल गणना करते समय व्यतिरेक वस्तुतः प्रस्तुतिकरण की गलती के कारण है। श्रीमद्भागवत, महाभारत, लिंगपुराण और मनुस्मृति आदि ग्रंथों में जो युग गणना बताई गई है, उसमें सूर्य परिभ्रमण काल को चार बड़े खंडों में विभक्त कर चार देव युगों की कल्पना की गई है। एक देव युग को ४,३२००० वर्ष का माना गया है। इस आधार पर धर्मग्रंथों में वर्णित कलिकाल की समाप्ति की संगति प्रस्तुत समय से ठीक–ठाक बैठ जाती है।

यह संभव है कि विरोधाभास की स्थिति में लोग इस काल गणना पर सहज ही विश्वास न कर सकें, अस्तु, यहाँ ''युग'' का तात्पर्य विशिष्टता युक्त समय से माना गया है। युग निर्माण योजना आंदोलन अपने अंदर यही भाव छिपाए हुए है। समय बदलने जा रहा है, इसमें इसकी स्पष्ट झाँकी है।

कलियुग की समाप्ति और सतयुग की शुरूआत के संबंध में आम धारणा है कि सन् १९८९ से २००० तक के बारह वर्ष संधि काल के रूप में होना चाहिए। इसमें मानवी पुरुषार्थयुक्त विकास और प्रकृति प्रेरणा से संपन्न होने वाली विनाश की, दोनों प्रक्रियाएँ अपने–अपने ढंग से हर क्षेत्र में संपन्न होनी चाहिए। बारह वर्ष का समय व्यावहारिक युग भी कहलाता है। युग संधि–काल को यदि इतना मानकर चला जाए, तो इसमें कोई अत्युक्ति जैसी बात नहीं होगी।

हर बारह वर्ष के अंतराल में एक नया परिवर्तन आता है, चाहे वह मनुष्य हो, वृक्ष, वनस्पति अथवा विश्व ब्रह्मांड सभी में यह परिवर्तन परिलक्षित होता है। प्रकाश शरीर की धारा: सभी

प्रक्रिया पूर्णतया आंतरिक होती हैं, अत: स्थूल दृष्टि को इसकी प्रतीति नहीं हो पाती, किंतु है यह विज्ञान सम्मत।

काल गणना में बारह के अंक का विशेष महत्त्व है। समस्त आकाश सहित सौरमंडल को बारह राशियों–बारह खंडों में विभक्त किया गया है। पंचांग और ज्योतिष का ग्रह गणित इसी पर आधारित है। इसी का अध्ययन कर ज्योतिर्विद यह पता लगाते हैं कि आगामी समय के स्वभाव और क्रिया–कलाप कैसे होने वाले हैं, पांडवों के बारह वर्ष के बनवास की बात सर्वविदित है। तपश्चर्या और प्रायश्चित परिमार्जन के बहुमूल्य प्रयोग भी बारह वर्ष की अवधि की महत्ता और विशिष्टता को ही दर्शाते हैं। इस आधार पर यदि वर्तमान बारह वर्षों को उथल–पुथल भरा संधिकाल माना गया है, तो इसमें विसंगति जैसी कोई बात नहीं है।

अंतरिक्ष विज्ञानियों के मतानुसार सौर कलंकों के रूप में बनने–बिगड़ने, घटने–मिटने वालें धब्बों की मध्यवर्ती अवधि बारह वर्षों की होती है। वे कहते हैं कि बारहवें वर्ष सूर्य में भयंकर विस्फोट होता है, जिसके कारण विद्युत चुंबकीय तूफान में तीव्रता आ जाती है। इसका प्रभाव पृथ्वी के प्रत्येक जड़–चेतन में अपने–अपने ढंग से दृष्टिगत होता है। नदियों–समुद्रों में उफान आने लगते हैं, वृक्ष वनस्पतियों की आंतरिक सरंचना बदल जाती है। जनसमुदाय की मन :स्थति में व्यापक असंतोष दिखाई पड़ने लगता है। खगोल विज्ञानियों का कहना है कि पिछले ढाई सौ वर्षों में इतने तीव्रतम सौर कलंक कभी नहीं देखे गए, जितने कि सन्१९८९–९० की अवधि में देखे गए। ''वाशिंगटन पोस्ट में छपे इस समाचार का हवाला देते हुए

कि सौर कलंकों की इस प्रक्रिया में इतनी प्रचंड ऊर्जा निःसृत होगी, जो मौसम असंतुलन से लेकर मानसिक विक्षोभ तक की व्यापक भूमिका संपन्न करेगी। इस दृष्टि से अब इन अगले वर्षों के असाधारण घटनाक्रमों से भरा पूरा होने की आशा की जाती है।"

## अंतःस्फुरणा बनाम भविष्य बोध

जाने और सीखने की प्रक्रिया दूसरों के सान्निध्य में ही संपन्न होती है। यात्रा, पर्यटन भी इस उद्देश्य की कुछ हद तक पूर्ति करते हैं। इतने पर भी मनुष्य के अंतराल में निहित रहस्यमयी शक्तियों द्वारा अंतःस्फुरणा के रूप में मिलने वाली जानकारी को भी विस्मृत नहीं कर देना चाहिए। इनका कोई प्रत्यक्ष आधार न दीखते हुए भी इसमें उतनी ही सच्चाई है, जितनी दिन के आरंभ और अंत में, क्रमशः सूर्य के उदयाचल से निकलने और अस्ताचल में छिपने में है।

आरंभ काल में अग्नि का आविष्कार इसी अंतःस्फुरणा की देन थी। जिसे यह स्फुरणा हुई थी, उसने घर्षण का प्रयोग किया और अग्नि खोज ली। सूत कातना और उससे कपड़े बनाना इतना ज्ञान मानव को आरंभ में अंतःस्फुरणा द्वारा ही हुआ होगा। भाषा, लिपि, उच्चारण यहाँ तक कि अविज्ञात की असाधारण एवं अभूतपूर्व समझी जाने वाली अगणित शाखाओं, खोजों, आविष्कारों का श्रीगणेश इसी आधार पर संभव हुआ है। एक बार सुयोग बन जाने के बाद तो उस खोज में सुधार–परिवर्तन कर सकना संभव हो जाता है, पर जहाँ कोई प्रत्यक्ष आधार ही न हो, वहाँ इस प्रकार की अनायास सूझ को, व्यक्ति

खंड को, ऐसी ही उपलब्धि के रूप में अभिव्यक्त किया गया है और कहा गया है कि यह मन:शक्ति संपन्न व्यक्ति के माध्यम से ईश्वरीय वाणी का प्राकट्य है। इस प्रक्रिया में चाहे वे पैगंबर हों, देवदूत हों अथवा अतींद्रिय क्षमता संपन्न मनीषी, उन्हें व्यक्ति न मानकर एक प्रचंड विचार प्रवाह का प्रतीक माना गया व उनके माध्यम से भविष्य में क्या कुछ संपन्न होने वाला है, इसकी अभिव्यक्ति की गई। हर धर्म, समुदाय में ऐसे इलहाम रहस्यमयी अंत:स्फुरणा के रूप में देखे समझे जा सकते हैं।

भविष्य–ज्ञान, प्रोफेसी, पूर्वाभास इसी श्रेणी में सम्मिलित माने जाते हैं। उसके कथित रूप में घटित होने पर मान लिया जाता है कि निराधार नहीं है। उसके पीछे कोई न कोई सुनिश्चित आधार अवश्य होना चाहिए। भविष्य कथन का यह आधार चाहे जिस भी विद्या पर अवलंबित हो, उसे आश्चर्यजनक अद्‍भुत या दैवी ही समझा जाता रहा है। पर अब वैज्ञानिक भी इस बात को स्वीकारने लगे हैं कि वर्तमान के अध्ययन द्वारा भविष्य के बारे में बहुत कुछ बताया जा रहा है। इस संबंध में भविष्य विज्ञान (फ्यूचरालाजी) की एक प्रथक शाखा का भी विकास हो चुका है। इसे भविष्यवाणी तंत्र का एक अंग माना जाए, तो कोई अत्युक्ति न होगी।

इसी संदर्भ में विश्व के मूर्धन्य लेखकों की कई पुस्तकें यथा–एच. जी. वेल्स की ''शेप आफ दि थिंग्स टु कम'', ''टाइम मशीन'' तथा बी. एफ. स्किनर की ''बाल्डन टू'' '' ब्रेव न्यू वर्ल्ड'' एवं ''१९८४'' पिछले दिनों प्रकाशित हुई हैं। उन्हें देखते हुए ऐसा लगता है कि जैसे उन्होंने स्वयं भविष्य की झाँकी की हो और बाद में उसे ही पुस्तकाकार रूप दे दिया हो।

माइक्रोचिप्स, रोबोट, कंप्यूटर, अंतरिक्ष में तैराकी व अन्यान्य ग्रहों पर यान भेजे जाने की संभावनाओं को काल्पनिक ही माना गया था, पर क्रमशः समय गुजरने के साथ ही यह सब होता चला गया। जिन–जिन विद्वानों ने कंप्यूटर के आँकड़ों को आधार बनाकर भविष्य के संबंध में लिखा है, वे यही कहते हैं कि आज का चिंतन, निर्धारण भविष्य में सही निकले, तो कोई आश्चर्य नहीं किया जाना चाहिए। इसका कारण बताते हुए मनीषी कहते हैं कि प्रवाह सदा एक सा नहीं रहता। उसमें समय–समय पर उतार–चढ़ाव आते रहते हैं। हवा कभी तूफान बनती है, तो कभी बवंडर–चक्रवात का रूप धारण कर लेती है। इन्हीं संभावनाओं को दृष्टिगत रखते हुए लेखकगण–गुंथर स्टेंट, फ्रिटजोफ, काप्रा, एल्विन टाफलर ने अपनी कृतियों क्रमशः ''कमिंग आफ दि गोल्ड एज'', ''दि टर्निंग प्वाइंट'', एंड ''फ्यूचर शॉक'' में इक्कीसवीं सदी के आरंभ को व्यापक परिवर्तनों का काल और अपने वाले समय में सुख–समृद्धि होने की संभावना प्रकट की है।

इन सब संदर्भों, कथनों, तथ्यों का उद्देश्य मात्र इतना है कि लोगों में यह विश्वास पैदा किए जा सकें कि आगे आने वाला समय भयावह–त्रासदी भरा नहीं है, सुखद है। इक्कीसवीं सदी वैसी नहीं होगी, जैसी वर्तमान संकट भरी परिस्थितियों को देखकर अंदाज लगाया जाता है। इस आशावाद का मूल आधार है, मानवी विभूति अंतःस्फुरणा, पूर्वानुमान लगा पाने की दिव्य सामर्थ्य, जिसे कोई भी मनुष्य अपने अंदर जगा सकता है। आज जो भी कुछ भविष्य के संबंध में उज्ज्वल संभवनाएँ व्यक्त करते हुए कहा जा रहा है, उसकी जड़ें भी वहीं विद्यमान हैं। परोक्ष जगत में चल रही हलचलें व व्यापक स्तर पर किए जा रहे प्रयास–पुरुषार्थ जो प्रत्यक्ष भले ही दृष्टिगोचर न हों, उनकी

## वैज्ञानिक शोधें भी पूर्वाभास से उपजीं

अनेकानेक आविष्कारों पर दृष्टि डाली जाए, तो ज्ञात होगा कि इनका पूर्व स्वरूप एक खाके के रूप में मनीषीगणों के अंत:करण में उपज चुका था, उन्हें तत्संबंधी पूर्वाभास अंत:बोध हुआ। उसकी परिणति एक प्रारंभिक आविष्कार के रूप में हुई। क्रमश: संशोधन होते–होते आज वाली प्रगतिशील स्थिति में विज्ञान ने यह यात्रा पूरी कर ली है। कुछ आविष्कारों पर नजर डालें तो बात और भी साफ हो जाएगी।

न्यूटन ने गुरुत्वाकर्षण की शक्ति के सिद्धांत की जानकारी देकर विज्ञान जगत में क्रांति ला दी। सब जानते हैं कि वे चिंतन में निमग्न थे। एक सेब का फल टूटकर पृथ्वी पर गिरने की घटना ने ही उनकी अंत: प्रज्ञा में हलचल मचा दी, यह पृथ्वी पर ही क्यों गिरा? यह चिंतन करते–करते वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि पृथ्वी के अंदर प्रचुर मात्रा में गुरुत्व बल विद्यमान है, जो वस्तुओं को अपनी ओर आकर्षित करता है।

पतीली में उबलते पानी की भाप से उठते एवं गिरते ढक्कन ने किशोर जेम्सवाट की अंत:सामर्थ्य को उकसाया और भाप की शक्ति का सिद्धांत उत्पन्न कर, न केवल रेलें चलाईं जा सकीं, अपितु औद्योगिक क्रांति का आधार खड़ा करने की स्थिति उत्पन्न हो ऐसी संभावनाएँ बन गईं।

श्री फ्रेंडरिक कैकुले भी बेंजीन के न्यूक्लियस की खोज करते–करते स्वप्नावस्था में चले गए। उनने देखा कि एक साँप कुंडली मारकर बैठा है अपनी ही पूँछ काट रहा है। तुरंत जागकर उनने इसका चित्र बनाया, तो आश्चर्यचकित देखते रह गए कि षटकोण के रूप में वे न्यूक्लियस की आकृति खींच चुके थे। आट्टोलेवी को भी इसी प्रकार स्नायु तंतुओं में काम करने वाले

केंद्रकों (सिनेप्सों) पर विद्युतप्रवाह के लिए उत्तरदायी था। कागज पर उतारते ही एसिटाइल कोलीन, कोलीन एस्टरेस जैसे महत्वपूर्ण न्यूरोकेमीकल्स की प्रारंभिक शोध का कार्य पूरा हो चुका था।

वस्तुतः जिन भी संभावनाओं पर मनीषा चिंतनरत रहती है, वे अचेतन के गर्भ में पहले ही जन्म ले चुकी होती हैं। कुछ अंतर्बोध के रूप में, तो कुछ स्वप्न, अंतःस्फुरणा के रूप में विकसित चेतना के धनी मनीषियों के मानस से फूट पड़ती है एवं आविष्कारों, पूर्वाभासों, भविष्यवाणियों का रूप ले लेती है।

अमेरिकी वैज्ञानिक बेंजामिन फ्रेंकलिन ने तड़ित बिजली को चमकते देखकर सोचा कि इस वर्षा भरे तूफान में पतंग उड़ाकर देखा जाए। गीली डोर से उनने एक चाबी बाँधकर जमीन पर रख दी। उस लोहे की चाबी से जब उनने विद्युत स्फुलिंग चमकते देखे तो तड़ित बिजली चालक आष्विकार उनकी विकसित चेतना में उद्भूत हो चुका था। यह चमत्कार है उस अंतर्बोध का, मनीषा में जागे पूर्वाभास का, जिसने ऐसा कुछ संभव है, यह सोचकर किसी वैज्ञानिक को प्रयास–पुरुषार्थ की प्रेरणा दी।

इतिहास बताता है कि हर कल्पना, हर अप्रत्याशित घटनाक्रम को मूर्त रूप देने का कार्य दैवी चेतना ने मानवी प्रज्ञा के माध्यम से ही किया है। राजनीतिज्ञ, समाज सुधारक, चिंतक, प्रकृति के रहस्यों की खोज करने वाले तथ्यान्वेषी, लेखक, कवि, संगीतकारों को भी भावी कार्यों संबंधी प्रेरणा इसी आधार पर मिलती रही है। यहाँ तक कि असंभव को संभव कर दिखाने वाली प्रकृति प्रेरणा भी अचेतन में ही जन्मी व मिस्त्र के पिरामिड, चीन की दीवार, पनामा–स्वेज नहर, ताजमहल, हालैंड द्वारा

गए, जिन्हें युगांतरकारी कहा जाता है। जिन्हें डाक व्यवस्था, नोट करेंसी का प्रचलन करने की सूझी अथवा समाज व्यवस्था हेतु प्रचलन परंपराएँ बनानी पड़ीं, उन्हें भी अंतर्प्रज्ञा ने बोध कराया होगा, परब्रह्म की प्रेरणा उन्हें मिली होगी। पैगंबरों देवदूतों की बात करते हैं, तो आशय ऐसी ही विभूतियों से होता है, जिन्हें इलहाम होता रहा है। जिनकी विकसित चेतना भविष्य को पढ़ पाने में समर्थ रही है।

वही अंतःप्रेरणा, विकसित चेतना आज भविष्य पर दृष्टि डाले कुछ कहने पर उतारू है। आज संकटों से भरी वेला में दोनों ही प्रकार के भविष्य कथन हमारे सामने हैं। एक वे जिनमें आगामी वर्ष व इक्कीसवीं सदी के पूर्वार्ध को खतरों–संकटों से घिरा बताया गया है, दूसरी वे जिनमें भविष्य के संबंध में उज्ज्वल संभावनाएँ प्रकट की गई हैं। इन्हीं का कहना है कि यदि मानवी प्रयास क्रम उलट दिए जाएँ, दिशा बदल ली जाए, गलती सुधार ली जाए, तो संभावित विपत्तियों के घटाटोप छँट सकते हैं। घटा कितनी ही काली एवं डरावनी क्यों न हो, तेज आँधी उसे कहीं से कहीं पहुँचा देती है, उसकी भयावहता को निरस्त कर देती है। यही बात मानवी पुरुषार्थ के बारे में भी लागू होती है। वह चाहे तो हर भवितव्यता को बदल सकता है।

प्रस्तुत बेला जिससे विश्व मानवता गुजर रही है, परिवर्तन की है। युग परिवर्तन पूर्व में भी होता रहा है, जिसे सामूहिक विकसित चेतना नाम दिया जा सकता है। यही बिगड़ी स्थिति को देखते हुए सुनियोजित विधि व्यवस्था बनाने, प्राणवान प्रतिभाओं को इकट्ठा कर युग धर्म को निवाहने का सरंजाम पूरा करती है। अवतार इसी प्रवाह का नाम है। इन दिनों उसी महाकाल की प्रबल प्रेरणाएँ युग परिवर्तन के निमित्त नई परिस्थितियाँ विनिर्मित करती देखी जा सकती हैं। आवश्यकता इसी बात की है कि

समय को पहचानकर, अपने प्रयास भी इसी निमित्त झोंक दिए जाएँ। श्रेय को पाने व अवतार प्रक्रिया का सहयोगी बनने का ठीक यही समय है।

## इक्कीसवीं सदी एवं भविष्यवेत्ताओं के अभिमत

विश्व के मूर्धन्य विचारक, मनीषी, ज्योतिर्विद एवं अतींद्रिय द्रष्टा अब इस संबंध में एक मत हैं कि युग परिवर्तन का समय आ पहुंचा। सन् १९८९ से सन् २००० तक का समय इन सभी के अनुसार युग संधि की बेला है।

इन सभी भविष्यवाणियों के चार आधार माने जा सकते हैं : १–दिव्य दृष्टि संपन्न व्यक्तित्वों के अंत:स्फुरणा पर आधारित वचन, २–ज्योतिर्विज्ञान और फलित ज्योतिष की गणनाओं पर आधारित भविष्यवाणियाँ, ३–पुराण, कुरान, बाइबिल, गीता, रामायण, श्रीमद्भागवत जैसे धर्मग्रंथों में वर्णित भविष्य कथन, ४–वर्तमान परिस्थितियों के आधार पर विभिन्न भविष्य विज्ञानियों द्वारा वैज्ञानिक उपकरणों–आँकड़ों के विश्लेषण द्वारा किया गया आकलन। इनमें से प्रथम वर्ग के अतीद्रिंय क्षमता संपन्न व्यक्तियों के भविष्य कथनों का विश्लेषण करने पर ज्ञात होता है कि इनमें से अधिकाँश भविष्यवाणियाँ समयानुसार सही निकली हैं। वस्तुत: दिव्य दृष्टि में वह सामर्थ्य है, जिसके सहारे रहस्यमय अदृश्य जगत में भी झाँका जा सकता है और उस पर पड़े पर्दे को उघाड़ा जा सकता है। अदृश्यदर्शी यह कहते भी हैं। यद्यपि उन सभी को योगी ऋषि तो नहीं कहा जा सकता, पर अपने दिव्य दर्शन की विशिष्टता के कारण वे मनीषी तो हैं ही।

ऐसे मनीषियों में जिनकी गणना मूर्धन्यों में की जाती है, वे हैं–फ्रांस के प्रख्यात चिकित्सक नोरस्ट्राडेमस और काउंट लुईसन, जो, कीरो के नाम से भी विख्यात हैं। सुप्रसिद्ध जर्मन दार्शनिक शोपन हावर, इंग्लैंड की मदर श्रिपटन, अमेरिका की

परामनोविज्ञानी श्रीमती जीन डिक्सन एवं श्री एडगर के. सी. इजरायल के प्रोफेसर हरार आदि की गणना महान दिव्यदर्शियों में होती है। वर्ल्ड वाइड चर्च आफ गॉड के अध्यक्ष और प्लेन ट्रुथ पत्रिका के संपादक हर्बर्ट डब्लू आर्मस्ट्राँग भी इसी श्रेणी में गिने जाते हैं। भारत की महान विभूतियों एवं दिव्यदर्शियों में महर्षि अरविंद और स्वामी विवेकानंद के नाम अग्रणी हैं। इस्लाम धर्म के ख्याति प्राप्त विद्वान सैयद कुत्ब की गणना भी इसी वर्ग में की जाती है। यह सभी नाम उन कुछ मनीषियों–विभूतियों के हैं, जिन्होंने अपने दिव्य चक्षु के आधार पर जो देखा और कहा, वह प्रायः यथासमय शतप्रतिशत सच साबित होता चला गया।

**नोस्ट्राडेमस**–दिव्य द्रष्टा भविष्यवक्ताओं में सबसे प्रमुख और प्राचीन नाम फ्रांस के विख्यात चिकित्सक नोस्ट्राडेमस का आता है। उनका जन्म सन् १५०३ में और मृत्यु १५५९ में हुई थी। उनकी ४०० भविष्यवाणियों का संकलन ''सेंचुरीज'' नामक पुस्तक में कई खंडों में प्रकाशित हुआ है। उसमें १५वीं शताब्दी से लेकर सन् २०३७ की अवधि तक की भविष्यवाणियों का संकलन संग्रहीत है। सेंचुरीज में वर्णित भविष्यवाणियों में से सभी समयानुसार सही उतरी हैं। उनमें से प्रमुख हैं–फ्रांस की राज्य क्रांति, नैपोलियन और हिटलर के जन्म से पूर्व ही उनने उसके संबंध में लिखा था कि इटली और फ्रांस की सीमा पर स्थित एक सामान्य परिवार में जन्मा बालक एक दिन दुनिया का सबसे तानाशाह बन बैठेगा, किंतु जीवन के उतरार्द्ध में उसे ''हेलेना'' नामक द्वीप में कैदी का जीवन व्यतीत करते हुए मृत्यु का वरण करना होगा। इतिहास वेत्ता जानते हैं कि यह सब घटनाएँ ठीक उसी प्रकार घटित हुईं जैसा कि नोस्ट्राडेमस ने अपने भविष्य कथन में लिखा।

सबसे निरंकुश तानाशाह के रूप में उल्लेख किया है। पैदा होने के लगभग ३५० वर्ष पूर्व ही नोस्ट्राडेमस ने उसके अभ्युदय और पराभव का सारा इतिहास लिपिबद्ध कर दिया था। जापान में हुए बम प्रहार और उससे उत्पन्न विभीषिका एवं नर संहार का वर्णन भी उनने अपनी अंतर्दृष्टि के आधार पर कर दिया था, जिसका साक्षी द्वितीय विश्व युद्ध है। इसके अतिरिक्त उनकी भविष्यवाणियों में बीसवीं शताब्दी के अंतिम दो दशकों में बुद्धिवाद का चरमोत्कर्ष पर पहुँचना, वैज्ञानिक क्षेत्र में आविष्कार, प्रकृति के साथ छेड़छाड़ करने में दैवी प्रकोपों के घटाटोपों का गहराना और अंतत: एशिया से मानव जाति के उज्ज्वल भविष्य के निर्धारण हेतु एक प्रचंड शक्ति का प्रादुर्भाव होना आदि सम्मिलित हैं। नोस्ट्राडेमस ने लिखा है कि बुद्धिवाद के पराकाष्ठा पर पहुँचने के बाद भक्तिवाद की, श्रद्धा संवर्धन की, एक बड़ी शांति की लहर आएगी और युग परिवर्तन होकर ही रहेगा।

नोस्ट्राडेमस की पुस्तक, '' सेंचुरीज'' का विश्व भर के ५० से अधिक विद्वानों ने गहराई से अध्ययन किया है। इनमें से एक आक्सफोर्ड की १८ वर्षीय छात्रा ऐरिका ने उनकी हस्तलिखित पुस्तक को पुस्तकालय से ढूँढ निकाला। इन अध्ययन कर्त्ताओं का कहना है कि उसमें जो कुछ भी लिखा है, वह सब या तो घटित हो चुका है अथवा आने वाले निकट भविष्य में घटित होने वाला है। उनके मतानुसार नोस्ट्राडेमस ने सतयुग के आगमन से पूर्व एक तीसरी विध्वंसक महशक्ति ''एंटीक्राइस्ट'' का उल्लेख किया है, जिसे कलियुग की असुरता का चरमोत्कर्ष कहा जा सकता है। इन दिनों विश्व इसी अवधि से गुजर रहा है। यह संधिकाल सन् १९९९ तक चलेगा। इस अवधि में एक नई आध्यात्मिक चेतना का उदय अनुशासनों, मान्यताओं एवं वैज्ञानिक निर्धारणों को [illegible] कर संसार की संभावनाओं को निरस्त

करेगा और नए युग का श्रीगणेश होगा, जिसे उन्होंने ''एज आफ ट्रुथ'' का नाम दिया।

नोस्ट्राडेमस ने सांस्कृतिक दृष्टि से संपन्न भारतवर्ष के एक महाशक्ति के रूप में उभरने की बात अपनी भविष्यवाणियों में लिखी है और कहा है कि तीन ओर से सागर से घिरे, धर्म प्रधान, सबसे पुरातन संस्कृति वाले एक महाद्वीप से वह विचारधारा निस्रत होगी, जो विश्व को विनाश के मार्ग से हटाकर विकास के पथ पर ले जाएगी। सभी मनीषी इन भविष्यवाणियों में भारतवर्ष के एक विश्वनेता के रूप में उभरने की झलक देखते हैं और कहते हैं कि भावी समय की विचारक्रांति ही नवयुग की आधारशिला रखेगी।

**महर्षि अरविंद :** सभी प्रॉफेटस, भविष्यवेत्ताओं, दिव्य दृष्टि संपन्न मनीषियों का मत है कि सन् २००० के आगमन से पूर्व जो प्रलंयकर हलचलें दिखाई पड़ेंगी, इनसे किसी को निराश नहीं होना चाहिए। महर्षि अरविंद का कहना है कि जब भी कभी उच्छृंखलता अपनी सीमा लाँघ जाती है, तो आत्मबल संपन्न व्यक्तियों में सुपरचेतन सत्ता अवतरित होती है। इस सामूहिक चेतना का नाम ही अवतार प्रक्रिया है। अब महाकाल की युग प्रत्यावर्तन प्रक्रिया व्यक्ति के रूप में नहीं, विचारशक्ति के रूप में अवतरित होगी एवं इसे ही निष्कलंक प्रज्ञावतार कहा जाएगा। व्यक्ति की विचारणा में परिवर्तन के प्रवाह के रूप में यह जन्म ले चुकी है एवं बुद्धावतार के उत्तरार्द्ध के रूप में विगत शताब्दी से गतिशील है।

**स्वामी विवेकानंद :** स्वामी विवेकानंद ने सन् १८९७ में एक भाषण अपने मद्रास प्रवास की अवधि में दिया था। यह भाषण ''भारत का भविष्य'' शीर्षक से ''विवेकानंद संचयन'' नामक पुस्तक में प्रकाशित हुआ है। इसमें उन्होंने भविष्यवाणी

की थी कि ''जन-जन तक व्यावहारिक अध्यात्म के सूत्रों को पहुँचाने के लिए मंदिरों को जनजाग्रति केंद्रों के रूप में विकसित होते देखा जा सकेगा। व्यापक स्तर पर संस्कार शिक्षा के केंद्र खुलेंगे। संस्कृति का प्रचार प्रसार होगा और संस्कृत विश्व भाषा बनेगी। आने वाला युग एकता का-समता का होगा। इस आध्यात्मिक साम्यवाद को कार्य रूप में परिणत करने में अनेक नवयुवकों की महती भूमिका होगी। वे ही संस्कृति के उद्धारक-रक्षक बनेंगे और नवयुग की कल्पना को साकार रूप में कर के दिखाएँगे।''

**दिव्य दृष्टा प्रो. हरार :** प्रोफेसर हरार की गणना विश्व के मूर्धन्य दिव्य द्रष्टा भविष्यवक्ताओं में की जाती है। जन्म इजरायल के एक धर्मनिष्ठ यहूदी परिवार में हुआ था। उनके द्वारा की गई भविष्यवाणियाँ प्राय: यथा समय सच सिद्ध होती रही हैं। भावी परिवर्तनों के बारे में वह कहा करते थे कि ''मुझे स्पष्ट दिखाई दे रहा है कि भारतवर्ष एक विराट शक्ति के रूप में उभरेगा। वहाँ एक संस्थान धर्मतंत्र को माध्यम बनाकर विचार क्रांति का विश्वव्यापी वातावरण बनाएगा। सन् २००० तक समस्त छोटी बड़ी शक्तियाँ मिलकर एकाकार हो जाएँगी। तब न भाषा का बंधन रहेगा और न सांप्रदायिकता एवं क्षेत्रीय विभाजन की संकीर्णता का। सब मिलजुलकर रहेंगे और मिल बाँटकर खाएँगे।''

**जीन डिक्सन :** ''माई लाइफ एंड प्रोफेसीज'', ''ए गिफ्ट आफ प्रोफेसी'' एवं ''द काल टू द ग्लोरी'' नामक पुस्तकों की लेखिका श्रीमती डीन डिक्सन चौदह वर्ष के किशोर वय से ही अपने भविष्य कथन के लिए बहुचर्चित रही हैं। एक ''क्रिस्टल वॉल'' के माध्यम से उनके द्वारा की गई भविष्यवाणियाँ समय-समय पर शत-प्रतिशत सही उतरती रही हैं। वे अभी भी अमेरिका

में कार्यरत हैं। उनने सन् १९४५ में अमेरिका के तत्कालीन राष्ट्रपति फ्रेंकलिन रुजवेल्ट की मृत्यु की घोषणा वर्षों पूर्व कर दी थी। इसी तरह १९५३ में स्टाालिन की मृत्यु एवं उनके उत्तराधिकारियों की भी वे घोषणा कर चुकी थीं, जो आगे चलकर सही निकलीं। संयुक्त राष्ट्रसंघ के महासचिव डेग हेमरशील्ड के सन् १९६१ में एक हवाई दुर्घटना में मारे जाने की घोषणा महीनों पूर्व वह कर चुकी थीं। वही हुआ भी।

जीन डिक्सन तब विश्व विख्यात हो चुकी थीं, जब सन् १९६० में अमेरिका के राष्ट्रपति जॉन एफ केनेडी के चुनाव जीतते ही उनने पूर्व कथन कर दिया था कि नवबंर १९६३ के द्वितीय सप्ताह में टेक्सास प्रांत में उनकी हत्या कर दी जाएगी। हत्या के पूर्व राष्ट्रपति भवन तक वह तीन बार चेतावनियाँ भी प्रेषित कर चुकीं, परंतु भवियतव्ता नहीं टली। जवाहरलाल नेहरू के असामयिक निधन एवं रूसी नेता खुश्चेव के पतन की भी वे पूर्व घोषणा कर चुकी थीं।

बीसवीं शताब्दी के अंतिम बारह वर्षों के बारे में उनकी भविष्यवाणी रही है कि अमेरिका गृह युद्ध के साथ मध्यपूर्व के युद्ध में उलझ जाएगा। यूरोपीय सभ्यता भोगवाद एवं युद्ध की नीति को छोड़कर अंततः भारतीय संस्कृति के जीवन मूल्यों को अपनाने के लिए बाध्य होगी। संसार भर के उच्चकोटि के प्रतिभाशाली वैज्ञानिक एक मंच पर एकत्र होकर विश्व मानवता के लिए नए–नए आविष्कार करेंगे ऊर्जा के वैकल्पिक स्त्रोत–प्रचुर मात्रा में खोज लिए जाएँगे। शिक्षा के क्षेत्र में आमूल–चूल परिवर्तन हो जाएगा और बच्चों को प्राचीन गुरुकुलों की तरह संस्कार शालाओं में सुसंस्कारिता की शिक्षा मिलने लगेगी। वे कहती हैं कि तब मानव का मस्तिष्कीय विकास एवं अतींद्रिय क्षमताओं का विकास इस सीमा तक हो जाएगा कि वे विचार

संप्रेषण से ही एक दूसरे से संपर्क किया करेंगे और विश्व एक सूत्र में आबद्ध हो जाएगा।

इक्कीसवीं सदी को जीन डिक्सन ने उज्ज्वल संभावनओं से भरापूरा बताया है। वे बताती हैं कि सन् २००० तक ''नीति और अनीति'' का संघर्ष तो चलता रहेगा, पर अंततः नीति की, सत्प्रवृत्तियों की ही विजय होगी। सन् २०२० तक धरती पर स्वर्ग की कल्पना साकार होने लगेगी। तब न प्रदूषण की समस्या रहेगी और न बीमारी–भुखमरी से किसी को त्रस्त होना पड़ेगा। चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में अद्भुत उन्नति होगी। अंतरिक्षीय यात्राएँ प्रकाशगति से भी तीव्र गति से चलने वाले यानों द्वारा संपन्न हुआ करेंगी। सन् २०२० तक सारी मानव जाति को क्रिया–व्यापार एक ही विश्व सत्ता के अधीन संचालित होता हुआ दृष्टिगोचर होगा।

अपनी प्रसिद्ध कृति ''माई लाइफ एंड प्रोफेसीज'' के आठवें अध्याय में जीन डिक्सन लिखतीं हैं कि ''इक्कीसवीं सदी नारी प्रधान होगी। विभिन्न क्षेत्रों का नेतृत्व महिलाएँ संभालेंगी।'' विश्व शांति स्थापना की दिशा में भारत की भूमिका का उन्होंने विशेष उल्लेख किया है और कहा है कि अपने आध्यात्मिक मूल्यों एवं वैचारिक क्रांति के माध्यम से वह समस्त विश्व में समतावादी शासन का सूत्रपात करेगा। उनके भविष्य कथन के अनुसार राष्ट्रसंघ का कार्यालय अगले दिनों भारत में बनेगा।

## धर्मग्रंथों में वर्णित भविष्य कथन

धर्मग्रंथों को ''अपौरुषेय'' कहा गया है। उन्हें ईश्वर की वाणी माना गया है। दिव्य द्रष्टाओं, भविष्यवक्ताओं की तरह उनमें भी आने वाले समय के संबंध में बहुत कुछ कहा गया है। वे सभी इस दृष्टि से एकमत प्रतीत होते हैं कि बीसवीं सदी का अंत

और आगामी युग मनुष्य जाति के उज्ज्वल भविष्य के रूप में सामने आएगा। इस संदर्भ में विभिन्न धर्मग्रंथों का अभिमत इस प्रकार है–

**श्रीमद्भागवत**–कलियुग का अंत निकट है और अभी युग संधि वेला चल रही है। इतना ही नहीं, उसके द्वादस स्कंध के द्वितीय–तृतीय अध्याय में कलियुग, उससे पूर्व और बाद के समय के लक्षणों का विस्तार पूर्वक वर्णन किया गया है। किस प्रकार मध्य युग के बाद अनास्था का बाहुल्य, संस्कार शून्यता में अभिवृद्धि, आचार–विचार में भ्रष्टता का आधिक्य होगा, यह सब प्रथम अध्याय में वर्णित है। द्वितीय अध्याय में कलिकाल की विवेचना करते हुए शुकदेव जी नई–नई बीमारियों का पनपना, संप्रदायवाद का बढ़ना, लोगों का परस्पर एक दूसरे के प्रति असहिष्णु होना, वह सब जो इन दिनों हम देख रहे हैं, इस काल की विशेषता बताते हैं। सतयुग का उल्लेख करते हुए वे कहते हैं कि कलियुग के अंतिम दिनों में निष्कलंक सत्ता के अवतरण में सद्भावना और सात्विकता की सर्वत्र अभिवृद्धि होगी।

**वाल्मीकि रामायण** में युद्ध कांड के श्लोक ९५–१६० में सतयुग के आगमन को सुनिश्चित बताते हुए, उस समय में लोगों के व्यवहार, दृष्टिकोण, परिस्थिति का वर्णन किया गया है।

**हरिवंश पुराण** के भविष्य पर्व में कहा गया है कि कलियुग की पूर्व संधिवेला के समापन का ठीक यही उपयुक्त समय है।

**महाभारत** के वन पर्व में उल्लेख आता है कि जब एक युग समाप्त होकर दूसरे का प्रारंभ निकट आता है, तो संसार में संघर्ष और विग्रह उत्पन्न होते हैं। जब चंद्र, सूर्य और बृहस्पति तथा पुष्य नक्षत्र एक राशि में आएँगे, तब सतयुग का शुभारंभ

सुखद भविष्य के रूप में होगा।

ओल्ड टेस्टामेंट के डैनियल तथा ''रेवेलेशन'' अध्यायों में इस बात की चर्चा की गई है कि बीसवीं सदी की समाप्ति से पूर्व नया युग आने से पहले प्राकृतिक आपदा और मानवी विग्रह चरमोत्कर्ष पर होंगे। ''सेवन टाइम्स'' वर्णित इन भविष्य वाणियों के विशेषज्ञ समझे जाने वाले पुरातत्ववेत्ता एवं हिब्रू भाषा विशारद डा. विलियम अलब्राइट एवं जेम्स ग्रांट ने इनके घटित होने का सही–सही समय १९८० से २००० के बीच बताया है। इसमें इस सदी के अंत में स्वर्णिम युग की स्थापना की भी बात कही गई है। नोस्ट्राडेमस की ऐसी ही भविष्य वाणियों की संगति इससे ठीक–ठीक बैठ जाती है।

इस्लाम धर्म–इसमें भी चौदहवीं सदी को उथल–पुथल भरा समय बताया गया है। यह समय आज की परिस्थितियों से पूर्णत: मेल खाता है। ''कुरआन सार' पुस्तक में बिनोवा लिखते हैं कि कयामत के बाद समस्त पृथ्वी पर ऐसा प्रकाश छा जाएगा कि हमेशा दिन रहे, रात्रि की कालिमा कभी न आए। वे कहते हैं कि इस दिव्य प्रकाश से विश्वात्मा को अद्भुत शांति मिलेगी।

''इस्लाम भविष्य की आशा'' पुस्तक में श्री सैयदकुल कहते हैं कि इक्कीसवीं सदी का प्रारंभ विज्ञान और धर्म के अद्भुत समन्वय के रूप में होगा। डा. कैरेल की पुस्तक ''अज्ञात मानव'' का हवाला देते हुए वे लिखते हैं कि आने वाले समय में शिक्षा प्रणाली आमूलचूल बदलेगी और भाव प्रधान शिक्षा पर जोर दिया जाएगा। इससे वातावरण आध्यात्मिक बनेगा और नई मानव जाति के रूप में पृथ्वी पर महामानवों का प्रादुर्भाव होगा, जिससे सर्वत्र एकता और समता का राज्य स्थापित होगा।

इस प्रकार न केवल दिव्य दृष्टि संपन्न महामानव, अपितु

विभिन्न धर्मग्रंथ भी एक ही तथ्य की ओर संकेत करते हैं कि नवयुग की अरुणोदय वेला आ पहुँची। अब समय के प्रवाह के साथ व्यक्ति को अपने चिंतन को भी बदल लेना चाहिए, नहीं तो परब्रह्म की चेतन सत्ता उसे दंड व्यवस्था द्वारा भी सही मार्ग पर लाना जानती है एवं वह ऐसा करके रहेगी।

## उज्ज्वल भविष्य की सरंचना हेतु संकल्पित प्रयास

अवाँछनीय के समापन और वाँछित विकास के लिए राजनीति, आर्थिक, सामाजिक और संस्थागत प्रयत्न तो होने ही चाहिए, पर यह नहीं भुला देना चाहिए कि अदृश्य जगत की भूमिकाएँ भी ऐसे प्रयत्नों में अतिशय महत्वपूर्ण होती हैं। पानी के प्रवाह के साथ तिनके बहते चले जाते हैं। हवा के दबाव के साथ चलने वाले, कम शक्ति लगाकर भी तेज गति पकड़ते चले जाते हैं। इसलिए महत्वपूर्ण कार्यों के शुभारंभ, देव आवाहन के साथ अदृश्य शक्तियों की साक्षी में किए जाते हैं।

इन दिनों, पिछली प्रगति के नाम पर अवाँछनीयताओं को स्वच्छंद रूप से अपनाने वाली दुष्प्रवृत्तियों का निराकरण भी होना है, और उनके स्थान पर सत्प्रवृत्तियों का संस्थापन भी। इस दुहरे महान परिवर्तन के लिए जहाँ प्रत्यक्ष पुरुषार्थ की आवश्यकता है, वहाँ उसके साथ अदृश्य संकल्प, साहस और दूरदर्शी कौशल भी जुड़ा रहना चाहिए। यही इन दिनों की आवश्यकता भी है, जिसकी पूर्ति के आधार पर दुहरे मोर्चे पर, विश्वव्यापी संघर्ष भरे परिवर्तन का उद्देश्य, बिना विलंब लगे और बिना असाधारण अवरोधों का सामना किए संपन्न हो सके।

समय ने प्रचंड गति पकड़ ली है, जो कार्य हजारों वर्षों में भी नहीं हो पाए थे, वे कुछ दशकों में संपन्न हो चले हैं। कुछ सौ वर्ष पुराना व्यक्ति गति तब की परिस्थितियों के साथ आज के

वातावरण की तुलना करे, तो प्रतीत होगा कि वह किसी परीलोक जैसे क्षेत्र में आ पहुँचा। यह युग परिवर्तन की सामान्य गति में असाधारण तीव्रता आने का ही प्रतीक है। अगले दिनों यह प्रवाह और भी अधिक गति पकड़ेगा और जो हेर–फेर पिछली शताब्दियों में हुआ है, उसकी तुलना में अगली सदी के चमत्कार और भी अधिक बढ़े–चढ़े होंगे। इसलिए आम मान्यता बनती जाती है कि इक्कीसवीं सदी में पतन का प्रवाह रुकेगा और उज्ज्वल भविष्य की सरंचना का कार्य तूफानी गति से आगे बढ़ेगा। यह महाकाल की प्रेरणा है–ईश्वर की इच्छा है–समय की माँग है। इसे युग धर्म का पांचजन्य उद्घोष भी कह सकते हैं। इसमें प्रचंड मानवी पुरुषार्थ उभरेगा, पर स्मरण रखा जाए कि इसके पीछे नियंता की प्रचंड प्रेरणा और सुनिश्चित योजना ही काम कर रही होगी। मनुष्य तो स्वयं नगण्य होते हुए भी उसका अनुगमन करके हनुमान, अंगद, नल–नील और भीम, अर्जुन जैसी भूमिकाएँ निबाहते और सर्वत्र आश्चर्यजनक सफलताएँ उपलब्ध करते दिखाई देंगे। गीताकार ने अर्जुन से कहा था कि कौरव दल का मरण तो नियति ने ही करके रख दिया है, राज्य सुख और अक्षय यश का भागी बनने से कतराता क्यों है? सुयोग का लाभ उठाने में बुद्धिमानी क्यों नहीं देखता? ऐसी ही प्रचंड प्रेरणाएँ असंख्यों को मिलेंगी और वे अंतःस्फुरणा के आधार पर ही इतना कुछ करेंगे, जितना करने के लिए किसी को असाधारण प्रलोभन देकर भी उकसाया नहीं जा सकता।

बारह वर्ष बीतते–बीतते ऐसा सरंजाम जुट जाएगा जिसमें उज्ज्वल भविष्य आकाश से बरसने वाली घटाटोप मेघ मालाओं की तरह, अपने चमत्कारों से हर किसी को चमत्कृत कर सके। इन दिनों हर वरिष्ठ प्रतिभाशाली के मन में, कुछ आदर्शवादी

कथन की सच्चाई का प्रमाण पाया जा सकता है, होनी का सहज अनुमान लगाया जा सकता है।

इस संदर्भ में विश्व के कोने–कोने में अपने–अपने ढंग की सृजन उमंगों के साथ–साथ एक अति महत्वपूर्ण उभार शांतिकुंज, हरिद्वार के क्षेत्र से भी उभरता देखा जा सकता है। इन्हीं दिनों आरंभ हुए, युग संधि महापुरश्चरण का एक अद्‌भुत उपचार देखने ही योग्य है। उसे सामूहिक साधना का एक अभूतपूर्व प्रयोग कहा जा सकता है। इस तपश्चर्या साधना से संबंधित ऐसी ऊर्जा उभरेगी, जो विशालकाय सामूहिक प्रयत्नों से ही उत्पन्न होती देखी जाती है। मानवी श्रम और मनोबल की सामूहिकता के चमत्कारी परिणामों के, अपने–अपने ढंग के अनेक प्रमाण हैं। अध्यात्म क्षेत्र में इसकी उपमा शांतिकुंज के युग संधि महापुरश्चरण के रूप में दी जा सकती है। आशा की गई है कि इस संधि बेला के बारह वर्षों में प्राय: चौबीस लाख व्यक्ति यहाँ अथवा यहाँ से संकल्प लेकर, अपने–अपने स्थान पर पुरश्चरण की प्रक्रिया को कार्यान्वित करेंगे। नव संस्थापित प्रज्ञा मंडलों के साप्ताहिक सत्संगों को इसी युग साधना से जुड़ा हुआ प्रयत्न समझा जाना चाहिए।

शांतिकुंज को युग चेतना की गंगोत्री कहा जा सकता है। सूर्य सर्वप्रथम पूर्वांचल से निकलता है और वहाँ से आगे बढ़ते–बढ़ते समस्त संसार को आभा से आच्छादित करता है। गंगोत्री से आरंभ होने वाला निर्झर, बंगाल पहुँचते–पहुँचते सहस्र धाराओं में विकसित हुआ दीख पड़ता है। इस युग साधना का शुभारंभ शांतिकुंज से होते हुए भी, उसका विस्तार देश के कोने–कोने और विश्व के हर भाग में व्यापक होते हुए देखा जा सकेगा। उसका प्रभाव भी युग परिवर्तन की पृष्ठभूमि में आंशिक स्तर की

से सृजनात्मक हलचलों का उभार इस आधार पर उभरकर आने की संभावना आँकी जा सकती है, जो गोवर्धन उठाने जैसे महान कार्य को लाठियों की सहायता मिल जाने से संपन्न हो जाने के समान है।

शांतिकुंज का निर्माण ही इसके लिए उपयुक्त स्थान खोजकर किया गया है। गंगा की गोद, हिमालय की छाया, सप्त ऋषियों की तपोभूमि, दिव्य सान्निध्य, अखंड दीप, निरंतर चलने वाली साधना का नियोजन जैसे संयोग, एक साथ एक स्थान पर अन्यत्र कदाचित ही कहीं देखे जा सकें।

स्थान और समय का चयन अपने आप में असाधारण महत्व रखता है। महाभारत के लिए कुरुक्षेत्र चुना गया था। भुसावल के केले, लखनऊ के अमरूद, नागपुर के संतरे, मैसूर का चंदन प्रसिद्ध है। वह उत्पादन हर कहीं उसी स्तर का नहीं हो सकता। बीजों के बोने का समय सही रखना अच्छी फसल पाने के लिए आवश्यक है। वर्षा और बसंत की, असाधारण दृश्य उत्पन्न करने वाली अपनी–अपनी अवधि होती है। वे विशेषताएँ हर समय नहीं देखी जा सकती हैं। सेनीटोरियम उपयुक्त जलवायु में बनाए जाते हैं। ब्रह्मांड की खोज करने हेतु कोणार्क के सूर्य मदिंर जैसी जगह चुनकर निर्धारित की गई, जहाँ संसार भर के वैज्ञानिक सूर्य ग्रहण का अन्वेषण–परीक्षण करने आया करते हैं। इसी प्रकार संसार में अनेक स्थान अपनी विशिष्टता के लिए प्रख्यात हैं। हिमालय क्षेत्र को तपस्या के लिए अनादि काल से उपयुक्त स्थान माना जाता रहा है। शांतिकुंज की निर्माण स्थली भी ऐसे ही सूक्ष्म परीक्षणों के उपरांत चुनी गई है। यहाँ जो आते हैं, वे अपनी–अपनी पात्रता और आवश्यकता के अनुरूप शक्ति, साहस और प्रकाश प्रेरणा लेकर वापस

बनाया गया है, और उसे युग चेतना की गंगोत्री मान कर उसके विश्व विस्तार की प्रक्रिया किसी अदृश्य प्रेरणा के संकेत पर क्रियान्वित हो रही है।

दिव्य चेतना जब लोक मंगल के लिए आपातकालीन व्यवस्था बनाती है, तब सामान्य क्षमता संपन्नों द्वारा भी असाधारण कार्य हाते देखे जाते हैं। युग चेतना के अनुरूप संकल्पित प्रयास करने वालों के साथ शक्ति–सामर्थ्य की अदृश्य घटाएँ स्वतः जुड़ जाती हैं। गीध–गिलहरी, वानर–रीछ आदि के साथ यही हुआ था। ग्वाल–वालों, पांडवों के साथ भी ऐसा ही प्रवाह जुड़ गया था। बुद्ध के चीवरधारियों से लेकर गाँधी जी के सत्याग्रहियों तक के साथ यही सिद्धाँत लागू होता है। उनकी सामर्थ्य सामान्य थी, असामान्य थी निष्ठाएँ। निष्ठाओं के आधार पर दिव्य चेतना उन्हें अपना माध्यम बनाकर लोकहित के लिए असाधारण कार्य संपन्न करा लेती है। शांतिकुंज को भी कुछ ऐसा ही श्रेय सौभाग्य प्राप्त हुआ है।

## विचार क्रांति का एक छोटा माडल

वस्तुतः लगन, श्रद्धा और प्रामाणिकता के साथ यदि उच्चस्तरीय उद्देश्यों के लिए इन दिनों कोई सामान्य स्तर का तंत्र भी खड़ा हो, तो उसे असाधारण सफलता मिलेगी। शांतिकुंज ने इसी सूत्र को अपनाया है। इस तथ्य को अंगीकार करने वाली अनेक प्रतिभाएँ समग्र उत्साह के साथ नवनिर्माण के क्षेत्र में उमंगे भरी मन:स्थिति में कदम बढ़ा सकती हैं और अपने संकल्पों में दैवी अनुदानों को जुड़ा हुआ अनुभव कर सकती हैं। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि अर्जुन के रथ की सारथी भी तो दिव्य शक्ति ही बनी थी। शांतिकुंज के सूत्र संचालक ने भी परोक्ष सत्ता का प्रतिनिधि बन, प्राप्त होते रहने वाले संकेतों के आधार पर यह सारा सरंजाम जुटाया है।

भव्य भवन बनाने से पहले इनके छोटे आकार के मॉडल आनुपातिक आधार पर खड़े, विनिर्मित कर लिए जाते हैं। ताजमहल आदि के मॉडल आसानी से देखे जा भी सकते हैं। बड़े–बड़े बाँध, बड़ी परियोजनाएँ अट्टालिकाएँ पहले आर्चीटेक्ट की दृष्टि से मॉडल रूप में ही विनिर्मित कर, फिर उन्हें विभिन्न चरणों में साकार रूप दिया जाता है। शांतिकुंज ने इक्कीसवीं सदी के उपयुक्त उज्ज्वल भविष्य सरंचना के स्वरूप के अनुसार अपने आपको छोटे मॉडल के रूप में प्रस्तुत किया है।

इस मॉडल में युग की सामयिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु युग मनीषा द्वारा किए जा सकने वाले तीन महत्वपूर्ण प्रयासों को अनिवार्य रूप से जोड़ा गया है। १–युग चेतना को जनमानस के अंतराल तक पहुँचाने वाली महाप्रज्ञा की पक्षधर लेखनी। २–जन मानस को झकझोरने और उलटे को सीधा करने में समर्थ परिमार्जित वाणी। ३– अपनी प्रतिभा, प्रखरता और प्रामाणिकता को पग–पग पर खरा सिद्ध करते रहने में समर्थ पुरोधाओं–अग्रदूतों का परिकर।

युग क्रांतियों में सदा यही तीनों अपनी समर्थ भूमिका निभाते रहे हैं। अनीति अनाचार को आदर्शवादी प्रवाह में परिवर्तन कर सकने वाले महान कायाकल्प इन्हीं तीन अमोघ शक्तियों द्वारा संपन्न होते रहे हैं।

आज की परिस्थितियों में क्या ऐसा संभव है? इस पर सहज ही विश्वास नहीं होता। कारण कि इन दिनों आदर्शवादिता मात्र कहने सुनने की चीज रह गई है। वह व्यवहार में भी उतर सकती है, इस पर सहज ही विश्वास नहीं होता। इसीलिए यह उपाय सोचा गया है कि इतने महान प्रयोजन की पूर्ति एवं विशाल आयोजन के लिए एक विश्वस्त, परिचय देने वाला मॉडल खड़ा किया जाए प्रज्ञा अभियान की रूप रेखा का

व्यावहारिक क्रियान्वयन किस प्रकार संभव है? इसी के लिए एक छोटा, किंतु आदर्श एवं आनुपातिक मॉडल शांतिकुंज के रूप में बनाकर खड़ा कर दिया गया है। इसे देख समझ कर सही कल्पना की जा सकती है कि भविष्य कैसे बदलेगा? नूतन सदी कैसे आएगी?

सामान्यतया अपने चारों ओर दृष्टि दौड़ाने पर पता चलता है कि जनसाधारण के लिए प्रचलनों का अनुकरण सरल पड़ता है। बुद्धि संगत, सामयिक, उपयोगी न होने पर भी लोग उन्हें आग्रह पूर्वक अपनाए रहते हैं, पर नए दीखने वाले प्रचलन अत्यंत आवश्यक होने पर भी गले नहीं उतरते। कड़वी औषधि रोग नाशक होने पर भी उसे सेवन करते ही मुँह बिचकता है। खादी का तत्त्वज्ञान जब तक जन साधारण को हृदयंगम कराया जाता रहा, तब तक उसका व्यवहार हुआ। अब उस ओर उपेक्षा बरती जाती देखी जाती है।

विचार क्रांति में पुरानी लीक से हट कर नया उपयोगी मार्ग अपनाने के लिए कहा जाता है, किंतु उससे पूर्वजों की हेठी होती मानी जाती है और पूर्वाग्रह के समर्थन में हजार बेतुके तर्क प्रस्तुत किए जाते हैं। ऐसी दशा में उस अति सामयिक एवं आवश्यक प्रयास से जन साधारण को सहमत कराने के लिए कुछ बड़े और कठिन उपाय अगले दिनों अपनाने होंगे।

इस संदर्भ में लेखनी, वाणी, प्रशिक्षण समारोह–आयोजन, व्यवहार, प्रचलन प्रस्तुत करने के साथ–साथ, यह भी उतना ही जरूरी है कि आदर्शवादी प्रतिपादनों को ऐसे लोग प्रस्तुत करें, जिनकी कथनी और करनी एक हो। जिनकी प्रामाणिकता और प्रखरता पर उँगली न उठती हो। इन सभी सरंजामों को जुटाने पर ही विचार–क्रांति का गतिचक्र आगे बढ़ सकता है, भले ही वह छोटे आकार का तथा धीमी गति से चलने वाला ही क्यों न

हो?

युग क्रांति के लिए अनिवार्य है कि भ्रांतियों के हर पक्ष पर प्रहार करने वाले प्रतिपादन प्रस्तुत किए जाएँ, और उनके स्थान पर जो विवेकयुक्त स्थापनाएँ की जानी हैं, उसके लिए तर्क, तथ्य, प्रमाण, उदाहरणों के साथ भाव संवेदनाओं को स्पष्ट करने वाली शैली में प्रभावशाली लेखन किया जाए। उसके प्रकाशन के लिए भी मिशनरी स्तर का तंत्र खड़ा किया जाए। सामान्य रूप से लोग हलका मनोरंजन साहित्य पढ़ते हैं, साहित्य को प्रकाशक छापते भी हैं। इस लोकापयोगी साहित्य को प्रकाशित करना और जन–जन तक पहुँचाने के लिए उसे सस्ता भी रखना आवश्यक है। साथ ही हर शिक्षित को वह साहित्य आग्रह पूर्वक पढ़ाया जाए, ऐसा तंत्र भी विकसित करना आवश्यक है।

साधन रहित परिस्थितियों में बड़ा सरंजाम जुट नहीं सकता। याचना करने, अर्थ संग्रह करने की अपेक्षा सूत्र संचालकों द्वारा यह उचित समझा गया कि उपयोगिता को अपने बलबूते लोकप्रिय बनने देने का अवसर दिया जाए। इससे प्रस्तुतिकरण के स्तर की सहज समीक्षा भी हो जाएगी।

अब से ५० वर्ष पूर्व इसी प्रयोजन के लिए हिंदी ''अखंड ज्योति'' प्रकाशित की गई। यह मासिक पत्रिका मात्र न तो हमारी चिंतन चेतना का नवनीत था, जिसकी प्रेरणा सतत् हमें दुर्गम हिमालय से मिलती थी। आरंभ में इसकी ५०० प्रतियाँ छापी गईं। स्वयं सेवक स्तर पर घर–घर जाकर बाँटने का क्रम बनाया गया। अब यह उसकी अपेक्षा ५०० गुनी अधिक, अर्थात ढाई लाख से अधिक की संख्या में छपने लगी है। क्रमशः बढ़ते–बढ़ते १९८९ के अप्रेल माह तक उसकी ग्राहक संख्या तीन लाख आ पहुँची है। अध्यात्म तत्त्वदर्शन का विज्ञान सम्मत

प्रतिपादन, विज्ञान को नई दिशा देने वाले समन्वयात्मक तथ्य परक लेखों का संकलन, मनुष्य में छिपी अनंत संभावनाएँ व उनके विकास के विधि–उपचारों के संबंध में इस पत्रिका का लेखन संपादन हरिद्वार से ही होता है, प्रकाशन मथुरा से। जिसने भी पढ़ा है, उसे न केवल लेखन शैली ने प्रभावित किया है, वरन् गूढ़ समयानुकूल प्रतिपादनों ने नई प्रेरणा भी दी है।

दूसरी पत्रिका आज से २७ वर्ष पूर्व ''युग निर्माण योजना'' नाम से आरंभ की गई। इस विषय वस्तु की परिधि वह थी, जो अखंड ज्योति की सीमा में नहीं आती थी। परिवार एवं सामाजिक निर्माण के लिए प्रस्तुत किए जाने वाले प्रतिपादनों का प्रचार–प्रसार यह पत्रिका करने लगी। देखते–देखते यह भी ७० हजार छपने लगी। गुजराती, मराठी, उड़िया, तमिल, तेलगू भाषा के संस्करण बड़ी संख्या में पाठकों के समक्ष पहुँच रहे हैं। इनमें गुजराती पत्रिका युग शक्ति नाम से डेढ़ लाख से भी अधिक की संख्या में प्रकाशित हो रही है। गुरुमुखी, बँगला एवं अँग्रेजी संस्करण प्रकाशित हुए, पर उनकी व्यवस्था ठीक तरह न बन पाने के कारण उन्हें पुस्तकाकार रूप में समय–समय पर प्रकाशित किए जाने की व्यवस्था बना ली गई। इस प्रकार पत्रिकाओं के जो संस्करण छपते हैं, उनकी संख्या चार और पाँच लाख के बीच रही है। हर पत्रिका को न्यूनतम दस पाठक पढ़ते हैं। इस प्रकार वे सभी मिलकर प्रायः पच्चास लाख व्यक्तियों की विचार चेतना को हर माह झकझोरती हैं।

बिना विज्ञापन लिए, बिना अर्थ याचना किए, मात्र अपनी उपयोगिता और पाठकों की सहयोगी सद्भावना के सहारे यह ग्राहक संख्या बढ़ी है। मात्र कागज, छपाई एवं डाक खर्च का ही भार इस प्रकाशन पर पड़ता है एवं नो प्रॉफिट, नो लॉस, प्रकिया पर अखंड ज्योति ६० रुपए वार्षिक (पृष्ठ ६४), युग शक्ति

गुजराती, ४० रुपए वार्षिक (पृष्ठ ५२), युग निर्माण योजना हिंदी, ३० रुपए वार्षिक (पृष्ठ ३६) सतत् प्रकाशित हो रही है एवं विज्ञापन न लेने का अपना संकल्प दुहराती हुई दूने उत्साह से पाठकों के बीच पहुँच रही हैं।

यह एक उदाहरण है कि बड़ी प्रतिभाएँ यदि बड़े साधनों से बड़े क्षेत्र में यह कार्य करें, तो विचार क्रांति की प्रथम आवश्यकता की पूर्ति हो सकना किसी प्रकार असंभव नहीं रह सकता। जब एक व्यक्ति अपने श्रेय समर्पण से इतना कुछ कर सकता है, तो ऐसे ही अनेक की श्रम–साधना कितने बड़े को प्रभावित कर सकने वाली सफलता प्रस्तुत कर सकेगी, इसका अनुमान लगा सकना किसी के लिए भी कठिन नहीं होना चाहिए।

साहित्य क्षेत्र में स्थाई महत्व की पुस्तकों की भी आवश्यकता है। शांतिकुंज के माध्यम से एवं युग निर्माण योजना द्वारा युग साहित्य के अंतर्गत प्रायः ढाई हजार से अधिक पुस्तकें अब तक छपी हैं। सब मानव, परिवार, समाज की भिन्न–भिन्न समस्याओं पर हैं। देश की अधिकाँश भाषाओं में उनके अनुवाद हुए हैं। मूल्य के संबंध में वही निश्चित नीति है–न नफा न नुकसान। गरीब देश का, देहात परिकर का पाठक बड़े मूल्य की पुस्तकों का लाभ नहीं उठा पाता। प्रचार इसी आधार पर बन पड़ा है कि जिसने भी पढ़ा उसने दूसरों को पढ़ाया और उन्हें खरीदने के लिए उकसाया। झोला पुस्तकालय कंधों पर लादे, पाठक अपने परिचय क्षेत्र में निकलते हैं। दूसरों को पुस्तकें पढ़ने देने और वापस लेने जाते हैं। कोई उत्साह दिखाता है, तो बेच भी देते हैं। यह कार्य विशुद्ध सेवा भावना से होता है। इसलिए कमीशन की उलझन खड़ी नहीं होने पाती। ईसाई मिशन और कम्युनिस्ट प्रचारक अपना साहित्य प्रायः इसी प्रकार फैलाते रहे हैं।

पत्रिकाएँ और पुस्तकें कितना क्रांतिकारी कार्य कर सकती हैं, यह इन पंक्तियों के लेखक ने स्वयं देखा है। एक व्यापक परिकर के लोगों को बड़े प्रयास अपनाने की प्रेरणा देकर, विभिन्न भाषाओं और क्षेत्रों के लिए विचार संशोधन और संवर्धन के लिए बहुत महत्वपूर्ण प्रस्तुतियाँ इन पुस्तकों के माध्यम से की जा सकती हैं। इस प्रकार व्यापक परिवर्तन का आधार बन सकता है।

दूसरा पक्ष है वाणी। सत्संग, प्रवचन–गोष्ठी, सभाएँ, विचार–विनिमय, सत्र समारोह आदि इसी के अंतर्गत आते हैं। शांतिकुंज में पिछले लंबे समय से, वर्ष भर एक–एक माह के युग शिल्पी सत्र तथा ९–९ दिन के संजीवनी विद्या के प्रतिभा संवर्धन सत्र चलते आ रहे हैं, जिनमें अब तक पाँच लाख से भी अधिक व्यक्ति भाग ले चुके हैं। युग शिल्पी सत्र (जो १–१ माह के होते हैं) में प्रचारक स्तर की योग्यता उत्पन्न की जाती है। सुगम संगीत, सुगम वाद्ययंत्र, कथा प्रवचन, स्लाइड, प्रोजक्टर, वीडियो आदि के माध्यम से आदर्शवादी प्रचलनों की, दीवारों पर आदर्श वाक्य लेखन, स्टीकर आंदोलन, दीप यज्ञों के माध्यम से बिना खर्च के बड़े और प्रभावी समारोह स्तर की विधि व्यवस्था इन्हीं सत्रों में सिखा दी जाती है। प्रतिभागी सत्रार्थियों के निवास, भोजन, शिक्षण, आवश्यक उपकरण आदि की समुचित व्यवस्था यहाँ है। अपने अभ्यास व प्रशिक्षण के आधार पर ये प्रचारक जहाँ जाते हैं, वहाँ भीड़ एकत्रित कर, लोकरंजन से लोकमंगल–जन–जागरण का प्रयोजन पूरा करते हैं। जो प्रतिपादन गले उतारना है, उसे सुगम संगीत के माध्यम से प्रस्तुत करते रहते हैं व हजारों की संख्या में जनता इन आदर्शवादी प्रकरणों को सुनने आती है। स्थाई स्तर पर हर वर्ष प्रायः साढ़े तीन हजार प्रचारक इस सत्र पद्धति के अंतर्गत विनिर्मित हो जाते हैं।

जिनके पास समय कम है, वे नौ दिन के सत्रों में जीवन साधना विषयक संजीवनी विद्या का ज्ञान प्राप्त करने, अपनी मन:स्थिति का संवर्धन करने के निमित्त आते हैं। ये सत्र अलग से चलते हैं व उनकी संख्या प्राय: पाँच सौ से एक हजार के बीच हो जाती है। ये कार्यकर्त्ता भी क्षेत्रों में जाकर प्रचारक की भूमिका निभाते हैं।

## प्रामाणिक तंत्र का विकास

शिक्षकों को शिक्षित करने के लिए ऊँचे स्तर के व्यक्तित्व चाहिए और प्रेरणाप्रद वातावरण भी। इन दोनों ही आवश्यकताओं की पूर्ति शांतिकुंज में होती है। इस परिकर में प्राय: पाँच सौ व्यक्ति स्थाई रूप से रहते हैं, इनमें से अधिकाँश ग्रेजुएट, पोस्टग्रेजुएट स्तर के हैं। ऊँची नौकरियाँ छोड़कर, सूत्र संचालक को उदाहरण मानकर, मात्र युग सृजन शिल्पी संबंधी सेवा कार्यों के लिए समर्पित भाव से आए हैं। शरीर निर्वाह के ब्राह्मणोचित साधन लेकर गुजारा चलाते हैं और उत्साह पूर्वक बारह घंटे काम करते हैं। इनमें से कई ऐसे हैं, जो बैंक में जमा अपनी पूँजी से ही सारी व्यवस्था चला लेते हैं व आश्रम से कुछ नहीं लेते। यह अपने आप में एक अनोखा व विरला उदाहरण है।

कर्मठ और भावनाशील कार्यकर्त्ताओं की सर्वत्र कमी है, पर वे शांतिकुंज को अनायास ही मिलते चले आ रहे हैं, जिनमें एम.डी, एम.एस., एम. टेक, बी.आई.एम.एस., एम.एस.सी., पी.एच.डी., एल.एल.एम. स्तर के अनेक कार्यकर्त्ता हैं। शांतिकुंज के संचालकों का व्यक्तित्व जिन्होंने निकट से हर कसौटी पर परख कर देखा है, उनका मन यही हुआ है कि ऐसे वातावरण में रहकर, ऐसी कार्यशैली अपना कर अपने को धन्य बनाना चाहिए। इन कार्यकर्त्ताओं द्वारा विनिर्मित वातावरण का ही प्रभाव है कि शिविरार्थी अपने जीवन क्रम में कायाकल्प जैसी स्थिति

लेकर वापस लौटते हैं। प्रतिभा, प्रखरता और प्रामाणिकता की कसौटी पर कसा हुआ, पुरोधाओं–समर्पित प्रतिभाओं का यह परिकर ही इस संस्था का मेरुदंड है।

गाँव–गाँव नवयुग का अलख जगाने की आवश्यकता को समझते हुए चार संगीतज्ञ एवं एक वक्ता, इस प्रकार पाँच–पाँच की मंडलियाँ निरंतर कार्य क्षेत्र में घूमती रहती हैं। इनके लिए गाड़ियों की व्यवस्था है। वर्ष भर में डेढ़ हजार सम्मेलन हो जाते हैं, जिनमें दीप यज्ञ अथवा वार्षिकोत्सव मनाए जाते हैं। इसके लिए स्थाई भवनों के रूप में प्रज्ञा संस्थान विनिर्मित हैं, जो पूरे भारत में ३००० से भी अधिक हैं तथा अन्यान्य स्थानों पर सक्रिय कार्यकर्त्ताओं की शाखाएँ हैं। आयोजनों में सम्मिलित होने की एक ही दक्षिणा है कि एक दुष्प्रवृत्ति को छोड़ा और एक सत्प्रवृत्ति को अपनाया जाए। इस क्रम में हजारों लाखों लोगों ने अपनी बुराइयाँ छोड़ीं व अच्छाइयाँ ग्रहण की हैं।

मिशन से प्रभावित लोग न्यूनतम एक घंटा समय, पचास पैसा अंशदान प्रतिदिन देते रहते हैं। इन्हें स्थानीय परिकर में सत्प्रवृत्ति संवर्धन के लिए अंशदान देते रहने का व्रत लेना पड़ता है। कितने ही लोग आधा समय परिवार एवं आधा समय समाज सेवा के लिए लगाते हैं। इस श्रेणी के वानप्रस्थ भी मिशन ने बड़ी संख्या में बनाए हैं। इनमें महिला जाग्रति का उद्घोष करने वाली महिलाओं की संख्या पचास प्रतिशत से अधिक ही है। आशा की गई है कि यह प्रचलन समाज के हर क्षेत्र को अवैतनिक, अनुभवी कार्यकर्त्ता बड़ी संख्या में प्रदान करेगा।

किसी समय भारत के मनीषी–लोक सेवी सारे विश्व को मार्ग दर्शन देने में सक्षम थे। इतनी बड़ी संख्या में लोक सेवी, वानप्रस्थ परंपरा के अंतर्गत ही उपजते विकसित होते थे। अपने उत्तरदायित्व सीमित रखकर अथवा उनसे निवृत्त होकर पूरे

समय या सीमित समय के लिए वे लोक मंगल साधना हेतु निकल पड़ते थे। देव मानव गढ़ने वाली यह परंपरा पुनः जाग्रत की जानी चाहिए।

शांतिकुंज में आर्थिक स्वालंबलन के लिए कुटीर उद्योगों के प्रशिक्षण की विशेष व्यवस्था बनाई गई है। इसके द्वारा महिलाएँ अतिरिक्त आजीविका से पूरे परिवार को इतना सहारा देने का प्रयत्न करती हैं कि घर का एक व्यक्ति निरंतर समाज निर्माण के कार्यों में लगा रहे। ऊपर की पंक्तियों में संक्षेप में उन संभावनाओं की व्याख्या की गई है एवं जिनने अनेकों को प्रेरणा दी है।

संत बिनोवा कहते थे कि किसी संस्था को तभी तक जीवित रहना चाहिए, जब तक जनता उसके कार्यों का मूल्यांकन करके समुचित सहयोग प्रदान करे। यदि सहयोग बंद हो जाए, तो समझना चाहिए कि वहाँ लोक सेवियों की भावना व श्रमशीलता में कहीं त्रुटि आ रही है। तब अच्छा है कि उस तंत्र को बंद कर दिया जाए। शांतिकुंज ने अपने को इसी कसौटी पर कसे जाने के लिए आरंभ से प्रस्तुत रखा है। यहाँ की गतिविधियों का मूल्याँकन करने के उपरांत यदि समझें कि उनका ऐसी संस्था के लिए कुछ देना उचित है, तो बिना माँगे ही स्वेच्छापूर्वक कुछ देना, इसी आधार पर शांतिकुंज की अब तक प्रगति हुई है और यदि आगे उसे बढ़ना है, तो उसका भी आधार यही होगा।

एक छोटे मॉडल शांतिकुंज का उल्लेख यहाँ इसलिए किया गया कि हर क्षेत्र की प्रतिभाएँ अपने लिए कार्य सोचें और युग सृजन की अभीष्ट आवश्यकताओं को पूरा करें, नव सृजन की आधारशिला रखने हेतु महत्वपूर्ण कदम उठाएँ।

# युग निर्माण मिशन-संक्षिप्त परिचय

**उद्देश्य :** मनुष्य में देवत्व का उदय एवं धरती पर स्वर्ग का अवतरण । व्यक्ति निर्माण, परिवार निर्माण, समाज निर्माण । विचारक्रांति, नैतिक क्रांति, धार्मिक क्रांति एवं सामाजिक क्रांति द्वारा जनमानस का भावनात्मक परिष्कार ।

**गठन :** नव निर्माण के लिए तत्पर नित्य समय दान और अंश दान करने वाले लाखों कर्मनिष्ठों का पारिवारिक संगठन । प्रचारात्मक, रचनात्मक और सुधारात्मक कार्यक्रमों द्वारा मानवीय गरिमा को उभारने वाली गतिविधियों में संलग्न समुदाय ।

**आधार :** सदस्यों का दैनिक श्रमदान एवं अंशदान । नित्य ५० पैसा और २ घण्टे समय का नियमित अनुदान । इसी सामर्थ्य के बलबूते अनेकों महत्वपूर्ण गतिविधियों का गत ५० वर्षों से संचालन ।

**प्रमुख संस्थान :** ( १ ) गायत्री तपोभूमि, मथुरा ( २ ) अखण्ड ज्योति कार्यालय, मथुरा ( ३ ) गायत्री शक्तिपीठ, आंवलखेड़ा, आगरा ( ४ ) शांतिकुंज, हरिद्वार ( ५ ) ब्रह्मवर्चस्, हरिद्वार । भारत एवं विदेश में लगभग ४००० शक्तिपीठ, प्रज्ञापीठ एवं गायत्री परिवार की शाखाओं द्वारा प्रचार प्रसार ।

**प्रकाशन :** युग निर्माण योजना ( हिन्दी मासिक ), युग शक्ति गायत्री ( गुजराती मासिक ), अखण्ड ज्योति मासिक एवं अन्य कई पत्रिकाएं भारत की विभिन्न भाषाओं में प्रकाशित । विभिन्न विषयों पर पूज्य गुरुदेव द्वारा रचित लगभग ५०० पुस्तकों का प्रकाशन देश की विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं में ।

**गतिविधियां एवं प्रचार :** धर्म तंत्र से लोकशिक्षण, अग्नि साक्षी में सत्प्रवृत्तियां अपनाने के संकल्प युग निर्माण विद्यालय, मथुरा, नौ दिवसीय **साधना सत्र** एवं एक मासीय **युग शिल्पी सत्रों** का नियमित आयोजन । टोलियों द्वारा देश-विदेश में मिशन का प्रचार-प्रसार । कार्यक्षेत्र : समस्त भारतवर्ष एवं विश्व ।